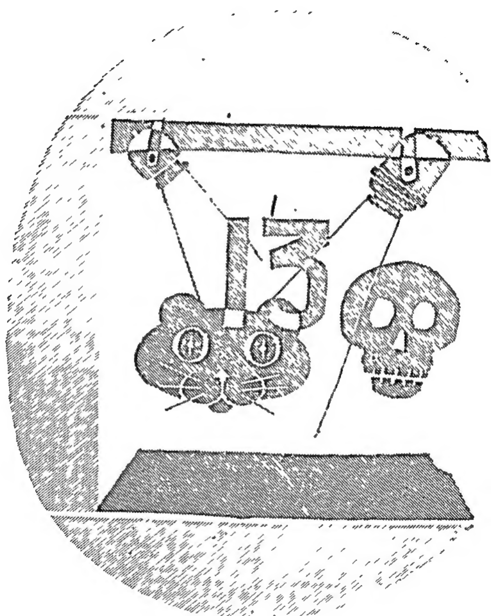
अन्धविश्वास विरोध के एकांकी


13

अन्धविश्वास विरोध के एकांकी

सम्पादक : गिरिराज शरण



प्रभात प्रकाशन दिल्ली

प्रकाशक : प्रभात प्रकाशन, चावड़ी बाजार, दिल्ली-११०००६
मुद्रक : कला भारती, नवीन शाहदरा, दिल्ली-३२/
मूल्य : सत्तर रुपये
संस्करण : प्रथम, १९९०

ANDHVISHWAS VIRODH KE EKANKI
Rs. 70 00
Ed. by Dr. Giriraj Sharan
Published by Prabhat Prakashan, Chawri Bazar, Delhi-110006

पगडण्डी से पुस्तकालय तक

कुछ ही समय पहले मैंने उन दोनो को देखा था।

उनमे से एक था, जो एक जटाधारी साधु बाबा के सामने नतमस्तक था और दूसरा एक शाहजी के सम्मुख हाथ जोडे खडा था। मैंने दोनो पर एक उचटती-सी नजर डाली, कुछ सोचा और आगे बढ गया।

यह जून का महीना था, जब दिन लम्बे और राते छोटी हो जाती हैं। जब सूर्य का प्रकाश चौबीस घटो मे से निरन्तर चौदह घटे धरती को उजाले के जल से स्नान कराता है और अँधेरे की अवधि कम हो जाती है। मैंने नजर उठाकर दूर तक देखा। आदमी हो, जानवर हो, घर-द्वार हो, घने पेड-पौधे हो, सभी की परछाइयाँ सिमटकर उनके आकार तले छुपने का प्रयास कर रही थी। आकाश के बीचो-बीच चमकते हुए सूरज ने अन्धकार को परिमित कर दिया था। कैसा अद्भुत दृश्य था वह! चारो ओर बिखरे हुए उजाले से सहमकर अन्धकार का भूत अपने लिए शरण स्थली ढूँढने पर विवश हो गया था।

वे दोनो शायद अब भी उसी अवस्था मे होंगे, एक साधु बाबा के सामने नतमस्तक और दूसरा शाहजी के सामने हाथ जोडे हुए। ध्यान आया, शहर के अन्धकार को तो रोशनी की तेज किरणें भेदकर पराजित कर देती हैं परन्तु यह अन्धकार यदि आदमी के भीतर हो, उसकी सोच और मस्तिष्क से जुडा हो, तो फिर ज्ञान की रोशनी ही उसे अँधेरे की दासता से मुक्त कर सकती है, कोई और व्यक्ति नही। लेकिन अन्धकार को अन्धविश्वास से दूर करने वाले लोग 'मैंने क्षण भर उनके विषय मे सोचा और आगे बढ आया।

पीछे मुडकर देखता हूँ तो दूर तक मेरे पीछे सर्प की तरह बल खाई हुई पगडण्डी बिछी थी। पगडण्डियो पर यात्रियो के पद-चिह्न थे। मार्ग के दोनो ओर हरियाली थी और जून की इस भरी दोपहर मे पछियो ने चहचहाना छोडकर वृक्षो की टहनियो पर अपना बसेरा कर लिया था।

मैं उन दोनो व्यक्तियो को जिस स्थान पर छोड आया था, अब उससे काफी दूर हूँ। लेकिन मुझे लगता है कि वे अब भी मेरे साथ-साथ हैं, एक समस्या बने हुए, एक प्रश्न का रूप धारण किये हुए। मैं कल्पना करता हूँ, उस निरीह मानव की,

जो ज्ञान और श्रम के बल पर संकट का समाधान न पाते हुए उन कथित चमत्कारों की भेंट चढ़ जाता है, जिन पर वह विश्वास तो करता है, लेकिन जिनके सम्बन्ध मे वह जानता कुछ भी नही है।

अनहोनी चीजों पर विश्वास करना शायद उसकी मजबूरी है। भविष्य के गर्भ में क्या है? वह नही जानता। उसके दु.ख कैसे दूर होंगे, वह इस बात से परिचित नही है। विपत्तियों और सकटों की जिस दलदल में वह धँस खड़ा है, उससे उभरने की विधि क्या होगी, उसे ज्ञात नही है। तब वह क्या करे? कहाँ जाए? किससे अपने दु ख का निवारण कराये? विवेक, श्रम, बुद्धि, कर्म और प्रयास की सारी बैसाखियाँ उसका साथ छोड़ गई है।

तब—? तब वह क्या करे?

दोनों व्यक्ति फिर मेरी कल्पना के पट पर उभर आये हैं। मैं उनसे पूछना चाहता हूँ, वे अपने ही जैसे एक अन्य व्यक्ति के सम्मुख यों नतमस्तक क्यों हैं? क्या कुछ मंत्रों का उच्चारण करने वाले सचमुच भविष्य के ज्ञाता हैं, क्या सचमुच वे उन घटनाओ को जानते हैं जो भविष्य में घटने वाली हैं और क्या वास्तव में इतनी शक्ति उनमें है कि वे उन अभावों की, उन संकटों की बेड़ियाँ तोड़कर फेंक दें, जिन्होंने भाग्य की परिभाषा में स्थापित होकर निरीह मानव को अपनी जकड़ में ले लिया है?

जून की इस भरी दोपहर मे मैं अपनी इस यात्रा में अकेला हूँ, लेकिन मुझे लगता है कि वे दोनों भी मेरे साथ-साथ हैं। दायें और बायें, जो अपने विवेक और बुद्धि को उसी स्थान पर छोड़ आए हैं जहाँ 'बाबाओं' के डेरे थे।

मैं कुछ और आगे बढ़ आया हूं। नजर उठाकर दोनों की ओर देखता हूँ। मुझे लगता है, जैसे एक इतिहास इनकी मुखाकृति पर लिखा है। मुझे यह भी लगता है कि जैसे मैं इस इतिहास का एक छोटा-सा पाठक हूँ, और विश्व के उस पहले मानव से वार्ता कर रहा हूँ, जिसने फौलाद की तरह मजबूत अपनी भुजाओ से पहली बार धरती की छाती चीरी थी तथा दिन-रात ढेरों पसीना बहाकर उस पर खाद्यान्न की फसल उगाई थी—वह खुश था कि उसने अपना भविष्य सुरक्षित कर लिया है।

लेकिन—?

लेकिन फसल अभी खेत से उसके घर तक नही आ पाई थी कि अचानक पूरब की ओर से घनघोर बादल उठा, जिसने चारों ओर से आकाश के असीम फैलाव को ढाँप लिया। भयभीत मानव ने सहमकर आकाश की ओर देखा। उसे क्रोध आया प्रकृति की इस तानाशाही पर।

यह बरसात का मौसम नही था। फिर वर्षा क्यों? बादल क्यो? लेकिन इस 'क्यो' का उत्तर देने वाला दूर तक कोई नही था। वह सोचता रहा, सोचता रहा—और फिर देखते-ही-देखते बिजलियाँ आसमान के बीच कड़कने लगी, बादलों

ने सूरज को अपने भारी परदो के पीछे छिपा लिया। भरी दोपहर मे रात्रि की कालिमा छा गई। गरज के साथ ओले गिरे, इतने कि धरती दूर तक बर्फ के ढेर मे परिवर्तित हो गई। कड़े परिश्रम से फसल उगाने वाला मानव ढूँढता रह गया कि उसका खेत कहाँ था, खलिहान कहाँ था।

तब वह झुक गया उन शक्तियो के सामने, जो उसके ज्ञान और उसकी पहुँच के बाहर थी। उसे लगा कि जैसे धरती के सीने को अपनी ताकत से खंगाल देने वाले हाथ, विवश हैं उन दैवी प्रकोपो को रोक पाने मे, जो न जाने कहाँ और किन परतो मे निहित हैं।

वह ढूँढने निकला था अपने बचाव का एक रास्ता, अपनी सुरक्षा का एक उपाय। भविष्य और भाग्य के उन खतरो से अपने-आपको मुक्त करने का मार्ग, जिनसे वह परिचित नही था और जिन तक उसके ज्ञान ने अभी अपनी कमन्द (रस्सी की सीढी) नही फेंकी थी।

ज्ञान और खोज की यात्रा मे शायद यही वह पड़ाव था जब उसकी भेंट हुई थी, उन 'जटाधारी बाबाओ' से जहाँ अभी अभी मैं उन दो व्यक्तियो को छोड आया हूँ, नतमस्तक और भयभीत !

मैं उस बेमौसम ओलावृष्टि की कल्पना करता हूँ, जिसने ज्ञान के विश्वास को अज्ञानता की भेंट चढाया था। तभी मेरी दृष्टि उस किसान की ओर उठ जाती है, जो खेत मे सिर झुकाये बैठा है, बिल्कुल निराश और घबराया हुआ। उसका सिंचाई करने वाला इजन किसी यान्त्रिक खराबी के कारण ठप्प हो गया है। पानी के अभाव मे खेत मुरझा गया है। जबरदस्त सूखा पडा है।

ओलावृष्टि से प्रभावित हुए उस पहले किसान और भयकर सूखे से पीडित इस दूसरे किसान के बीच हजारो लाखो साल की दूरी है—लेकिन भाग्य की डोर दोनो के हाथ मे है, पर भाग्य के फैसले को चुनौती देने का उनके पास कोई उपाय नही है।

बस बाबा हैं और शाहजी हैं।

मैं पिछले दो वर्ष से पड रहे भयकर सूखे के प्रकोप से जूझते हुए दुर्बल किसानो की कल्पना करता हूँ और विचार आता है, उस सत्तातन्त्र का, जिसने दैवी प्रकोपो से लडने का वैज्ञानिक आधार पैदा नही किया है और जो झुक गई है, उनके सामने,

जो तान्त्रिक विद्या मे दक्ष हैं,

जो आन्तरिक शक्ति से भविष्य का रूप मोड सकते हैं,

जो शब्दो के बल पर ऐसे चमत्कार दिखा सकते हैं, जो विज्ञान के बस मे नही हैं।



यह मथुरा है, यहाँ बहुत बड़े वर्षा-यज्ञ की तैयारी हो रही है, सत्तातन्त्र की देख-रेख में।

सारा देश २०वीं शताब्दी के इस भयंकरतम सूखे की त्रासदी से चिन्तित है। खेत बंजर-मैदानों मे परिवर्तित हो गए हैं। जमीन के भीतर पानी का स्तर इतना गिर गया है कि नलकूप अपने कंठों से पानी उगलने में असफल हो रहे हैं। आकाश पर दूर-दूर तक बादल का कोई टुकड़ा नही है। धरती सूखे की मार सह-सहकर जगह-जगह से चटख गई है। किसान हाथ-पर-हाथ धरे बैठा है और निराशापूर्ण दृष्टि से आकाश की ओर निहार रहा है। समाचार-पत्र खबरें प्रकाशित कर रहे हैं कि गुजरात, राजस्थान, मध्य प्रदेश तथा अन्य कई स्थानों पर हजारों पशु चारे के अभाव मे या तो मर गए या उनके स्वामियों ने विवश होकर उन्हें भूखो मरने के लिए अपने खूँटे से खोल दिया। उस समय मेरा मन पीड़ा से भर गया जब किसी समाचार-पत्र मे मैंने पढ़ा कि एक किसान महिला ने अपने अबोध बालक को गिनती के चन्द टकों में इसलिए बेच दिया कि पेट की आग बुझाने के लिए उसके पास रोटी नही थी और रोटी जुटाने के साधन अकाल का दानव निगल चुका था।

सोचता हूँ, सभ्यता की इतनी लम्बी यात्रा के बाद भी मनुष्य का जीवन प्रकृति की दया पर निर्भर है। आदमी जो आकाश से पाताल तक अपनी विजय-पताका फहराता हुआ ज्ञान और विज्ञान के शिखर तक पहुँच रहा है, इतना भी नही जानता कि यदि मानसूनी हवाएँ उससे रूठ जाएँ या अपना मार्ग बदल लें तो प्रकृति की इस बड़ी चुनौती का सामना वह कैसे कर सकता है।

विवशता आदमी को किन रास्तों की तरफ धकेल देती है, यह सत्ता के सिंहासन पर बैठे उन लोगों से पूछा जाना चाहिए जो विज्ञान से अधिक भरोसा करते हैं उस अन्धविश्वास पर जिसकी नागफनी जीवन के मरुस्थल मे आदमी की अज्ञानता ने बोयी थी, और जिसकी पकड़ मे एक साधारण आदमी ही नहीं, शक्ति-सम्पन्न शासनतन्त्र भी है।

हाँ तो बात मथुरा की थी।

आइए मथुरा चलें—

तन्त्रविद्या में दक्ष कुछ विख्यात 'बाबाओं' ने दावा किया है कि वे तान्त्रिक शक्ति से उस समय भी वर्षा कराने में सफल हो सकते हैं, जब बरसात का मौसम दूर हो, और देश के अधिकतर भागों मे भीषण सूखा पड़ रहा हो।

सरकार के अधीन कार्यरत विज्ञान एवं तकनीकी विभाग इस दावे पर विश्वास ले आया है।

यह मई का अत्यन्त गर्म और तपता हुआ महीना है। वर्षा ऋतु आरम्भ होने में अभी २५ दिन शेष हैं। दावा किया गया है कि एक विशाल यज्ञ के परिणाम-स्वरूप ४८ से ७२ घंटों के भीतर मथुरा के आस-पास कम-से-कम १० किलोमीटर

के क्षेत्र मे मूसलाधार वर्षा होगी और धरती पानी से भर जाएगी।

इस कार्यक्रम के लिए विज्ञान एव तकनीकी विभाग ने १० हजार रुपये का अनुदान स्वीकृत किया। शेष धन जनता से दान के रूप मे एकत्र किया गया। तन्त्र-विद्या पर विश्वास करने वाले देश के करोडो लोगो की आँखें मथुरा पर लगी हैं। यज्ञ की सारी तैयारियाँ पूर्ण हो चुकी हैं। बीसो कुण्टल चन्दन की लकडी, शुद्ध घी और हजारो रुपये की अन्य सामग्री का भण्डार यज्ञस्थल पर इकट्ठा हो गया है।

वेद-मन्त्रो के बीच तान्त्रिक यज्ञ का शुभारम्भ कर चुके हैं। सुगन्धित धुआँ आकाश की ओर लपक रहा है। वैज्ञानिक वायुमण्डल मे सभावित परिवर्तन का अध्ययन करने के लिए अनुसन्धान कक्षो से उपस्थित हैं। उनके हाथ मे दूरबीनें हैं और वे यन्त्र हैं, जिनसे वायुमडल मे होने वाले छोटे-से-छोटे परिवर्तन को भी जाँचा-परखा जा सकता है। हजारो-लाखो लोगो की भीड यज्ञ-स्थल के चारो ओर उमड पडी है। यही वे सब लोग हैं, जिन्हे सूखे के दानव ने तोडकर रख दिया था। इनकी आँखो मे आशा की ज्योति है और तान्त्रिको की आन्तरिक शक्ति पर एक ऐसा अटूट विश्वास जिसका आधार स्तम्भ अज्ञानता की धरती पर टिका होता है।

धुएँ के बादल यज्ञ-कुण्ड से उठ-उठकर आकाश की ओर लपक रहे हैं। लेकिन अभी तो यह मात्र धुएँ का आवरण है, इनमे मानसूनी हवाओ का जल कब प्रविष्ट होगा ? इसकी चिन्ता सबको है, मुझे भी, वैज्ञानिको को भी।

पहले चौबीस घट बीते, फिर अडतालिस और अन्त मे ७२ भी, लेकिन यज्ञ का धुआँ बादल नही बन सका। धरती प्यासी की प्यासी रही। २० हजार की सामग्री और हजारों-लाखो लोगो की आशाएँ यज्ञ की आग मे जलकर भस्म हो गयी, लेकिन जो चीज नही जल सकी, वह केवल आस्था और विश्वास का वह लोहा था, जो न मुडता है, न गलता है और जो शताब्दियो से निराश और असहाय लोगो का कवच बना हुआ है।

विश्वास की जोत लिये जो लोग मथुरा आए थे, वे सब तन्त्र विद्या को नही, कलयुग के स्वयम्भू एव पाखडी तान्त्रिको को दोष देकर वापस घर लौट चुके हैं। आइए हम भी घर चलते है।



अब फिर उसी पगडडी पर अकेला हूँ जहाँ से कुछ दूर पहले एक स्थान पर मैंने उन दो व्यक्तियो को देखा था, जिनमे से एक जटाधारी साधु बाबा के सामने नतमस्तक था और दूसरा 'शाहजी' के सम्मुख। मुझे लगता है, वह या उनकी परछाइयाँ अब भी मेरे साथ हैं। जी चाहता है, उनसे पूछूँ कि तुम किस दुख के निवारण हेतु आये हो ? वह कौन सी पीडा है जो तुम्हे इस स्थान पर खीच लाई है जहाँ तर्क नही, विश्वास की सत्ता है और विश्वास का सूत्र उन व्यक्तियो के हाथ मे है, जिनका ध्येय जन-सेवा नही, स्वार्थ है, व्यवसाय है। ये वे लोग है, जो पिता और परमेश्वर

दोनों को एक-साथ बेच देने पर भी लज्जित नहीं होते।

सोचता हूं, लौट जाऊँ और उन दोनों उत्पीड़ित व्यक्तियों को अपने साथ खींच लाऊँ जो आशा और विश्वास की रोशनी लेकर आये थे लेकिन भटक जाने वाले हैं, अन्धविश्वास की लम्बी अँधेरी गलियों में, मुड़कर पीछे देखता हूँ लेकिन पाँव आगे बढ़ जाते हैं। पगडंडी-पगडंडी चलता हुआ दूर निकल आया हूँ और अब एक ऐसे स्थान पर हूं जहां रायपुर (बिहार) के एक गांव की आबादी अपने पाँच सपूतों के शवों पर आंसू बहा रही है।

मैं खड़ा हूँ एक तन्त्र शिक्षा विद्यालय के सम्मुख। विद्यालय का संचालक और इन पाँच मृत युवकों का गुरु फरार है, और पुलिस उसकी खोज में लगी है। दुःख और आश्चर्य से विद्यालय की ओर देखता हूँ, सन्नाटा-ही-सन्नाटा है, श्मशान-जैसा।

कारण जानना चाहता हूँ, तो अखबार के पन्ने अचानक मेरे स्मृति-पटल पर फैल जाते है।

वह जो एक प्राइमरी विद्यालय में अध्यापक था, एक शिक्षा संस्थान खोलता है तन्त्र विद्या सिखाने के लिए; गाँव के सीधे-साधे युवक उसकी ओर खिंचने लगे हैं।

यह भारत है! जहाँ दीन-धर्म के नाम पर कुछ भी किया जा सकता है। न किसी से अनुमति लेने की आवश्यकता, न किसी कानून का भय, न प्रमाण-पत्र की जरूरत, न किसी योग्यता की। लोग धर्म के नाम पर विद्यालय खोल सकते हैं, प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित कर सकते हैं, सीधी-सादी जनता को मूर्ख बना सकते हैं और तो और रूपकुँवर-जैसी मासूम युवतियों को सती की दुहाई देकर आग की भेंट चढ़ा सकते हैं। कुछ भी किया जा सकता है। कानून की आँख तो उस वक्त खुलती है जब घटनाएँ घट चुकी होती हैं और लोग भिन्न-भिन्न प्रकार के अन्धविश्वासों का शिकार हो चुके होते हैं।

अगर मैं भूलता नहीं हूँ तो शायद उसका नाम अजीत साहू था, अपनी तान्त्रिक शक्ति से निर्जीव को जीवित कर देने का दावा करने वाला साहू! गुरु को देवता की तरह पूजने वाले शिष्य आँख मूंदकर विश्वास ले आए उसकी आन्तरिक शक्ति पर,

और फिर एक दिन एक युवक ने विषपान किया,
अगले दिन दूसरे ने—फिर तीसरे ने···
चौथे ने रेलवे लाइन पर कटकर जान दी···
पाँचवें ने फाँसी का फन्दा लगाकर अपनी जीवन-लीला समाप्त कर ली।

मृत्यु की पहली तीन घटनाओं को प्रशासन आत्म-हत्या के साधारण मामले ही समझता रहा लेकिन जब यह क्रम पाँच तक पहुँचा, तो प्रशासन के कान खड़े हुए।

पुलिस हरकत मे आई। जाँच-पड़ताल हुई। तब पाँच के पाँच शव बरामद हुए, जगल मे बनाये गए एक स्थान से शवो के पास मिठाई, नारियल तथा हवन की अन्य सामग्री ज्यो-की-त्यो रखी थी और गुरु फरार था। वह अपनी तन्त्र विद्या से किसी को भी जीवित नही कर सका था।

मेरे भीतर की चीख बार-बार मुझसे पूछती है कि उन अभागे परिवारो के घरो का अन्धकार अब कौन दूर करेगा, जिनके दीपक अजीत साहू ने बुझा दिए ? उन रोती बिलखती माताओ की छातियाँ कैसे शान्त होगी, जिनकी ममता के अधखिले फूल अन्धविश्वास की भेंट चढ गए ? उन बहनो की आँखो से कौन आँसू पोछेगा, जिनके सम्मान की रक्षा करने वाले हाथ मौत के दानव ने चबा डाले ? हो सकता है कानून आत्महत्या के लिए प्रेरित करने वाले साहू को मृत्युदण्ड दे

लेकिन यहाँ एक साहू नही, हजारो लाखो साहू हैं और हम विश्वास कर रहे हैं उन पाखडियो पर, उन निराधार विश्वासो पर, जिनका सम्बन्ध सत्य से नही, भ्रम और धोखे से है।

मैं रामपुर के निकट स्थित उस गाँव से भी लौट आया हूँ जहाँ आज भी अपने पाँच लाडलो की अकाल मृत्यु पर चीत्कार और कोहराम मचा है। जहाँ आज भी माताओ की आँखो मे आँसू हैं और पिता निराशा का बोझ लिये सिर झुकाये बैठे हैं। उनकी कमर टूट गई है और भुजाओ को अधरग मार गया है।

मैं घबराकर इस गाँव से भागता हूँ, भागता ही जाता हूँ, लेकिन नियति मुझे एक स्थान पर ले आई है जो वीरान है, जहाँ कब्रो के नाम पर मिट्टी के कुछ ढेर बिखरे पडे हैं। आँख खोलकर देखता हूँ तो मैं स्वय को भी एक कब्र के किनारे खडा पाता हूँ। भूली बिसरी यादें मस्तिष्क पर हमला करती हैं अखबार का एक और पन्ना मेरे सम्मुख लहराता है और मुझे याद आती है वह महिला जो एक 'शाहजी' के बताये टोटके की भेंट चढ गई।

वह नि सन्तान थी,

पर स्तनो मे ममता का ज्वार ठाठें मार रहा था। कोई उपाय नही था उसके पास। ज्ञान की रोशनी पहुँची नही थी उस तक। जो कुछ पहुँचा था उस तक, वह एक आस्था थी, एक विश्वास था उन लोगो के प्रति जिन्होने उस समाज मे अपनी एक सत्ता स्थापित कर ली थी जिस समाज की आर्थिक सत्ता और व्यवस्था ने पुरुषो और महिलाओ तक सच और ज्ञान के प्रकाश को पहुँचने नही दिया था।

आखिर मातृत्व की आग उसे खीच ले गई शाहजी के चरणो मे, जहाँ से वह एक उम्मीद, एक आशा लेकर आई। उसे विश्वास था कि चालीस दिन का व्रत और दुआओ के बोल और 'शाहजी' के आशीर्वाद नि सन्देह ही उसकी मनोकामना पूरी कर सकते हैं, उसकी गोद हरी हो सकती है।

दसवें दिन ही उसका वजन इतना घट गया कि वह पलँग से लग गई। रक्त

की कमी और दुर्बलता बढ़ती गई, बढ़ती गई और इससे पूर्व कि वह अपने व्रत के अन्तिम दिन तक पहुँचती, सुनसान जंगल में स्थित कब्रिस्तान के एक गड्ढे में सुला दी गई।

मैंने दुःख की मुद्रा में कब्र की मिट्टी उठाई। उसे सूँघा। मुझे लगा, जैसे इसमें झूठी आस्था और अज्ञानता की दुर्गन्ध आ रही हो। मैंने घबराकर वह मिट्टी फेंक दी और फिर उस पगडंडी पर चला आया, जहाँ से कुछ दूर पहले मैंने उन दो व्यक्तियों को छोड़ा था, जिनमें से एक नतमस्तक था किसी जटाधारी साधु बाबा के सामने और दूसरा हाथ जोड़े खड़ा था शाहजी के चरणों में!

सोचता हूँ इनका अन्त क्या होगा? क्या इनके दुःख दूर होंगे, अपनी इच्छाओं की पूर्ति कर सकेंगे ये? मुझे कोई उत्तर नहीं मिलता। हाँ, विशाल जीवन का एक मंच मेरे सामने है, जहाँ दिन-रात यह नाटक हो रहा है। पात्र नाच रहे हैं, उन्हें नचाया जा रहा है, भ्रमों और अन्धविश्वासों के इशारे पर···

मेरा दुःख बढ़ जाता है। मेरी घबराहट बढ़ जाती है···मैं भाग उठता हूँ उस पगडंडी से और शरण लेता हूँ उस पुस्तकालय में, जहाँ से मुझे ज्ञान और सत्य की रोशनी मिली थी—जिसने अन्धकार से लड़ने के लिए प्रेरित किया था मुझे···

मेरे चारों ओर लेखक हैं, कवि हैं, नाटककार हैं···विचारक हैं, दार्शनिक हैं···मैं उनकी ओर बढ़ता हूँ, नाटककार मुझे अपनी ओर आकर्षित करते हैं। मैं उनकी तरफ बढ़ता हूँ और सज जाता है फिर एक और मंच···

इस मंच पर भ्रमों और अन्धविश्वासों के मारे पात्र तो हैं जो अपनी-अपनी भूमिकाएँ रोचक ढंग से निभा रहे हैं, लेकिन मंच पर वह रोशनी तेज है, वह प्रकाश बहुत तीव्र है, जो अज्ञानता को ज्ञान में बदलेगा, धोखे को सत्य की शक्ति से पराजित करेगा। मुझे विश्वास है, अटूट और अटल विश्वास!

१६, साहित्य विहार,
बिजनौर (उ० प्र०)

(डॉ०) गिरिराजशरण अग्रवाल

क्रम

अंधविश्वास विरोध के एकांकी

चमत्कार



उपेन्द्रनाथ अश्क

पात्र-परिचय

तुर्की टोपीवाला
लबी चोटीवाला
कृपाणवाला
घटीवाला
सफेद दाढीवाला
अन्य राह चलते लोग

स्थान . एक बडे नगर का एक बडा बाजार।

समय : दिन।

[रगमच के बायें कोने मे 'बाइबिल सोसायटी' का महराबदार दरवाजा है। महराब के ऊपर बडे-बडे सुदर अक्षरो मे लिखा है :

"यीसू मसीह ने कहा, 'उठ !' और कुमारी उठ बैठी !" यह बाइबिल सोसायटी एक बडे खुले बाजार मे है। रगमच के दायें कोने मे बाइबिल सोसायटी के साथ की दुकान का आधा बोर्ड (जिस पर उप्पल एड कपनी लिखा हुआ है) और दरवाजे का आधा भाग साफ दिखाई देता है। बाइबिल सोसायटी और उप्पल एड कपनी की

सीमाएँ स्टेज के मध्य आकर मिलती हैं। बाइबिल सोसायटी की बिल्डिंग का रंग लाल है और दूसरी दुकान का मोतिया। दोनों दुकानों के आगे फुटपाथ है, जिस पर बिजली का एक खंभा भी उप्पल एंड कंपनी के सामने दिखाई देता है। फुटपाथ के इस ओर बायें से दायें अथवा दायें से बायें को जानेवाली तारकोल की सड़क है।

पर्दा उठने पर बाजार साधारण रूप से चलता दिखाई देता है। लोग अपने ध्यान में मग्न उधर से इधर और इधर से उधर आ-जा रहे हैं। एक फैशनेबुल लेडी उप्पल एंड कंपनी के दरवाजे में प्रवेश करती है। एक डाकिया बाइबिल सोसायटी के दरवाजे में से बाहर आता है।

कुछ क्षण बाद बायीं ओर से एक दुबला-पतला व्यक्ति सिर पर तुर्की टोपी रखे, गले में खुले गले की मैली-फटी कमीज और कमर में टखनों से ऊँचा, कदरे तंग, घुटनों पर (निरंतर पहने रहने के कारण) कुछ आगे को बढ़ा हुआ उटंग पायजामा पहने, सिगरेट के एक खाली टीन के बक्स को रस्सी से खींचता हुआ प्रवेश करता है और दोनों दुकानों के मध्य आ खड़ा होता है।

पल-भर के लिए वह राह-चलते लोगों को देखता है, फिर ऊँचे स्वर से बाइबिल सोसायटी के दरवाजे पर लिखे हुए मॉटो (Motto) को पढ़ता है।]

टोपीवाला : यीशू मसीह ने कहा, "उठ !" और कुमारी उठ बैठी। (सोसायटी के दरवाजे की ओर देखकर) बुलाओ अपने यीसू मसीह को कि मेरी इस मुर्दा मछली को जिंदा करे। (फिर दाँत पीसते हुए, मुंह चिढ़ाकर और राह-चलतों को सुनाकर) यीसू मसीह ने कहा, "उठ !" और कुमारी उठ बैठी। (फिर दरवाजे की ओर देखकर) बुलाओ अपने उस मसीह को कि इस मुर्दा मछली को जिंदा करे।

[उसकी आवाज सुनकर तीन-चार राह-चलते इकट्ठे हो जाते हैं, जिनमें एक लंबी चोटीवाला भी है।]

टोपीवाला (पूर्ववत् राह चलतो को सुनाकर) मसीह की सबसे बडी करामात यह थी कि वो मुर्दों को जिंदा कर देते थे। उन्होने जेरस की मुर्दा बेटी को छुआ और वो उठ बैठी। तो वो क्यो आकर मेरी इस मुर्दा मछली को नही जिलाते। (दरवाजे की ओर देख कर) निकालो अपने उस मसीह को कि मेरी इस मुर्दा मछली को जिंदा करे।

[कुछ और लोग आ जाते हैं, जिनमे एक कृपाणवाला भी है।]

चोटीवाला (आगे बढ़कर) क्यो भाई क्या बात है ?

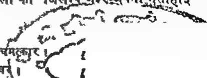
टोपीवाला 'अल मुवल्लिम' म मैंने एक मारके का मजमून लिखा था जिसम ईसाई मजहब की बुनियादी खामियो पर दलील के साथ बहस की थी। मेरे इस लेख का कोई माकूल[1] जवाब देने के बदले (सोसायटी के दरवाजे की ओर देखकर) पादरी बधावा राम ने अपने अखबार मे रसूले पाक की करामातो पर एतराज किया है। मेराज[2] की असलियत को समझना पादरी बधावा राम के बस की बात नही। कौन नही जानता कि खुदावन्दे करीम ने अपने रसूल को सातो आसमानो की सैर करायी और वो भी इतने कम अर्से मे कि जिस दरवाजे से रसूले पाक गये थे, उसकी कुण्डी उनके वापस आने पर अभी हिल रही थी। इस मोजजे[3] के कई मतलब निकल सकते हैं, लेकिन उन पर गौर करने की बजाय पादरी बधावाराम ने ओछे और लगव[4] एतराज किये हैं।

कृपाणवाला पर मियाँ, इस टीन के डिब्बे मे क्या है ?

टोपीवाला मछली !

कृपाणवाला मछली !

टोपीवाला हाँ, मुर्दा मछली ! मैं पादरी बधावाराम को चैलेंज देने आया हूँ कि अगर सचमुच यीसू मसीह मे यह ताकत थी कि वे मुर्दों को जिंदा कर देते थे और अगर सचमुच वो खुदा के बेटे थे, तो पादरी बधावाराम अपने उस खुदा के बेटे को बुलाये कि वो आकर मेरी इस मुर्दा मछली को जिलाये और अपनी मसीहाई का सुबूत दे।



१ माकूल—युक्तियुक्त। ३ मोजजा—चमत्कार।
२ मेराज—पराकाष्ठा। ४ लगव—लचर।

चोटीवाला : पादरी वधावाराम ! (चोटी पर हाथ फेर और हँसते हुए अपने पास खड़े एक दूसरे लंबी चोटीवाले साथी से) अरे ! यह वही वधावाराम है, जिसे हमने शुद्ध किया था परन्तु जो हमारे कठिन सिद्धांत पर पूरा न उतर सका था।

[पादरी वधावाराम सोसायटी के दरवाजे से झाँकते हैं।]

: (पादरी की ओर देखकर) हाँ पादरी साहब, बुलाइये अपने खुदा के बेटे को कि वह अपना चमत्कार दिखाकर इस मरी हुई मछली को पुनः जीवन प्रदान करे (लोगों को सुनाकर) यदि भगवान अमर और सर्वव्यापक हैं तो भगवान का पुत्र अमर और सर्वव्यापक क्यों न होगा और क्यों न यहाँ आकर इस मुर्दा मछली को जीवित करेगा।

[कुछ लोग भीड़ में आकर सम्मिलित हो जाते हैं। लंबी सफेद दाढ़ी वाला एक वृद्ध चुपचाप भीड़ के एक ओर खड़ा तमाशा देखने लगता है।

एक हाथ में बैग उठाये और दूसरे में घंटी लिये एक व्यक्ति सबसे पीछे आकर खड़ा हो जाता है।]

टोपीवाला : (घण्टीवाले को देखकर नारा लगाता है।) आये खुदा का बेटा और मेरी इस मुर्दा मछली को जिंदा करे।

[पादरी वधावाराम फिर अन्दर चले जाते हैं।]

चोटीवाला : (शिखा पर हाथ फेरते हुए) एक सभा में पादरी वधावाराम ने आर्यसमाजियों को मूस-पंथी कहा था—चूहे को शिवलिंग पर से प्रसाद उड़ाते हुए देखकर महर्षि को जो दैवी प्रेरणा मिली थी, उसका उपहास उड़ाते हुए उनके व्यक्तित्व की निंदा की थी। (भाषण देने के अंदाज में हवा में हाथ घुमाते और एड़ियाँ उठाते हुए) महर्षि दयानंद पूर्ण ब्रह्मचारी थे, उनके मुख पर अद्‌भुत, अलौकिक तेज और उनके अंगों में अपार शक्ति थी। अपने योगबल से वे ऐसी आश्चर्यजनक बातें कर सकते थे, जो दूसरों को चमत्कार मालूम होती थी। जालंधर में टिक्का साहब की गाड़ी को उन्होंने पीछे से पकड़ लिया। घोड़े शक्ति लगाकर थक गये। लेकिन वह तो ब्रह्मचारी का बल था, टस-से-मस न हुई गाड़ी। चमत्कार यह होता है। इसे बुद्धि स्वीकार करती है, परन्तु…

कृपाणवाला - (जोश मे आगे बढकर) इन्ही पादरी साहब ने हमारे बाबा साहब बाबा गुरु नानक के चमत्कारो की भी आलोचना की थी और मोदीखाने की बात को लेकर उनका मजाक उडाया था। वे तो सत्यावान[1] पुरुष थे। ननकाना साहब के लोग इस बात को अच्छी तरह जानते है। गुरु साहब के बहनोई जयगोपाल लोधी सुल्तान के यहाँ नौकर थे। सच्चे पादशाह के पिता कालूराम ने अपने पुत्र को आवारा समझकर जयगोपाल से कहा, "भाई, यह तो साधु-सतो की सगति मे रहकर आवारा और निकम्मा हो रहा है। इसे कही ठिकाने पर बैठाओ।" जयगोपाल ने सच्चे पादशाह की सिफारिश करके उन्हे मोदीखाने मे नौकर करवा दिया। बाबा ठहरे दरियादिल फकीर—वो क्या जानते हिसाब-किताब, जो भी उनके दरवाजे पर आता खाली हाथ न जाता, साधु-सत, पीर-फकीर सब मोदीखाने से मनमानी खैरात पाने लगे। होते होते यह खबर सुल्तान लोधी तक जा पहुँची कि तुम्हारा तो मोदीखाना ही लुटा जा रहा है। बस, सुल्तान ने जाँच-पडताल का हुकुम दिया। मोदीखाने का हिसाब होने लगा। गुरु साहब तराजू लेकर तोलने लगे। एक-दो, तीन-चार ' तेरह पर जाकर रुके, आगे गिनने के बदले उन्होने तेरह'' तेरा'' मै तेरा'' मै तेरा का पाठ शुरू कर दिया। सारा मोदीखाना तुल गया और जितना गुरु साहब के चार्ज से दिया था, उससे भी अधिक निकला (दरवाजे की ओर देखकर) पादरी बघावाराम एक जलसे मे कह रहे थे, "यह कैसे सभव हो सकता है?" मैं उनसे पूछना हूँ, यीसू मसीह ने किस तरह रोटी के दो टुकडो और तीन मछलियो को बरकत देकर उनसे अपनी सहस्रो भेडो की भूख मिटायी थी और सबके खा चुकने पर भी छह टोकरे-भर रोटियाँ और मछलियाँ बच रही थी?

टोपीवाला (नारा लगाता है।) आये मसीह और मेरी इस मुर्दा मछली को जिदा करे।

घटीवाला (घटी बजाता और भीड को चीरकर आगे आता हुआ) मैं मछली जिदा करता हूँ! मैं मछली जिदा करता हूँ!!

[लोग चकित से उनकी ओर देखते हैं।]

1 सत्यावान—शक्तिशाली।

घंटीवाला : (पूर्ववत् घंटी बजाता और आगे बढ़ता हुआ) मैं मछली जिन्दा करता हूँ ! मैं मछली जिंदा करता हूँ !!

[भीड़ के मध्य आकर यही आवाज लगाता हुआ घूमता है, जिससे एक छोटा-सा गोल घेरा बन जाता है। तुर्की टोपीवाले मियाँ साहब और घंटीवाले महोदय इस घेरे के मध्य रह जाते हैं।

घंटीवाले ने महीन मलमल का कुर्ता पहन रखा है, जिसमें से जालीदार बनियान झलक रही है। कमर में उसने महीन धोती बाँध रखी है। पाँव में बढ़िया चमचमाते पम्प-शू हैं। शरीर हृष्ट-पुष्ट और मूँछें लंबी और नोकों पर ऊपर को मुड़ी हुई हैं। आँखों में ऐसी चमक है, जो उसके चातुर्य का पता देती है, उसकी तुलना में तुर्की टोपीवाला महज एक भिखारी दिखायी देता है।

घंटीवाला घेरे के मध्य अपना बैग रख देता है और एक बार फिर घंटी बजाता हुआ घेरे में चक्कर लगाता है।]

: मैं मछली जिंदा करता हूँ, मैं मछली जिंदा करता हूँ, मैं मछली जिंदा करता हूँ ! (क्षण-भर केवल घंटी बजाता है।) इसी क्षण आपके देखते-देखते इस मछली को, इस मुर्दा मछली को जिंदा कर दूँगा, सिर्फ मुझपर भरोसा रखिये—मुझपर विश्वास रखिये।

दाढ़ीवाला : (अपनी सफेद दाढ़ी पर हाथ फेरता हुआ, जैसे अपने-आपसे) हम लोगों में विश्वास ही की तो कमी है।

घंटीवाला : (एक बार फिर घंटी बजाता हुआ) लेकिन मेहरबान, इससे पहले कि मैं इस मुर्दा मछली को जिलाऊँ, मैं मुर्दा इंसानों में जान डालना चाहता हूँ। मेहरबान ! आदमी उस परमात्मा, उस वाहे गुरु, उस खुदा की सृष्टि में सबसे बड़ी, सबसे उत्तम रचना है। उसके प्राण सहस्रों-सहस्रों ही नहीं, लाखों मछलियों के प्राणों से मूल्यवान हैं। मछली को जिलाने से पहले मैं उन नीम-मुर्दा इंसानों को जिंदा करना चाहता हूँ।

कृपाणवाला : इंसानों को !

घंटीवाला : मेहरबान ! आज जिंदा इंसान कहाँ हैं ? सौ में से किसी एक के चेहरे पर जिंदगी की झलक दिखाई देगी—पीले ज़र्द चेहरे, थकी उदास आँखें, सूखे-सड़े ठठरी-से शरीर ! ये जीते-जागते इंसान हैं ? मेहरबान, ये चलते-फिरते मुर्दे हैं—वो दम-खम, वो बल-

वीर्य, वो साहस और हिम्मत अब नहीं है ? (घटी बजाकर) मेहरबान ! ऐसा क्यो न हो ? आज वही चीजें हमारी पहुँच से बाहर हैं, जो हमारे जीवन के लिए सबस जरूरी हैं। (और भी ऊँचे स्वर म छाती पर हाथ रखते हुए) मेहरबान ! कितने लोग हैं, जो सीन पर हाथ रखकर कह सकते हैं कि वे शुद्ध दूध और घी प्रयोग करते हैं ? खालिस दूध घी जनता के लिए ऐसी नियामत बन गया है, जिसका पाना परलोक मे सभव हो तो हो, इस लोक म सभव नही।

दाढ़ीवाला सच है भाई, सच है !

[बाजार चलता रहता है, लोग आते-जाते रहते हैं।]

घटीवाला दूध घी दूर हमे तो स्वच्छ जलवायु भी प्राप्त नही। यह मछली मुर्दा है। क्यो ? इसलिए कि यह पानी क बाहर है। इसे इसका भोजन प्राप्त नही। हममे से अधिकाश जीत जी मुर्दा हैं। क्यो ? इसलिए कि हम हमारी खुराक नही मिलती। गाँवो मे जाइये। अब भी आपको छह छह सात सात फुट ऊँचे, ३७ ३७ इच चौडे सीनोवाले जवान मिलेंगे। स्वच्छ वायु, शुद्ध दूध घी और निर्मल जल—कौन है माई का लाल, जो सीने पर हाथ मारकर इस बात का दावा कर सकता है कि उसे ये सब प्राप्त हैं !

[सफेद दाढीवाले वृद्ध प्रभावित होकर सिर हिलाते हैं कि ठीक है भाई तू जो कह रहा है सच कह रहा है।]

(घटी को फिर एक बार बजाता हुआ) लेकिन मेहरबान ! यह गरीब जानवर अपनी मौत का आप जिम्मेदार नही। इसे तो मिया साहब नदी से पकड लाये हैं। इसका बस चलता तो यह अपने हाथो अपने जीवन को न जाने देता, लेकिन ये हमी इन्सान हैं जो अपने जीवन के अमूल्य सार को, अपने हाथो अपने बचपन या जवानी म गँवा देत हैं। मेहरबान ! जो भोजन हम खाते है, उसका रस बनता है, रस से रक्त, रक्त से मास, मास से चरबी, चरबी स हड्डी और हड्डी से गूदा और इस गूदे से वह जौहर बनता है, जिससे हमारे मन मस्तिष्क को शक्ति मिलती है, जिससे पुरुष पुरुष कहलाता है। यही वह रत्न है, जो हम अपनी मूर्खता से, अपने बचपन अथवा युवावस्था म अपने हाथो खो देते हैं और चलते फिरते मुर्दे दिखाई देते हैं। इस बात का श्रय श्री गुरु महाराज १०८ स्वामी आलोकानद जी वैद्यराज को है कि उन्होने

जवानी के इस सार को कायम रखने और पुरुष को फिर से पुरुष बनाने के लिए वह नुस्खा हासिल किया है. जिसके सेवन से मरे से मरा मनुष्य भी जवानी की अँगड़ाई लेकर जाग उठता है।

[फिर घेरे में चक्कर लगाता है।]

घंटीवाला : मैं मछली जिन्दा करता हूँ ! मैं मछली जिन्दा करता हूँ !! (फिर अपने स्थान पर खड़े होकर घंटी बजाते हुए) मियाँ साहब, इस मछली को मेरे सामने ले आइये।

[मियाँ साहब बक्स को खींच उसके सामने लाते हैं।]

: हाँ मेहरबान, इस मैदान में इस मछली को रख दीजिये। मैं पलक झपकते, आपके देखते-देखते, इसे जिन्दा कर दूँगा। ऐसी-ऐसी ओषधियाँ गुरु महाराज ने तैयार की कि प्रायः मरते-मरते लोग उठ खड़े हुए। साँप-काटे की एक अचूक औषधि मेरे पास है। मालवे और माझे के ऊसर इलाकों में बीसियों हृष्ट-पुष्ट जाट हर साल साँपों का शिकार हो जाते थे। गुरु महाराज के आदेश पर मैंने एक बार वहाँ जाकर दवा बाँटी। क्या मजाल जो पिछले दस वर्ष में साँप-काटे से एक भी मौत उन इलाकों में हुई हो। (बैग से एक नीली-सी टिकिया निकालता है।) मेहरबान ! जिस तरह लोहा लोहे से कटता है उसी तरह ज़हर का प्रभाव भी ज़हर ही से दूर होता है। गुरु महाराज कहा करते थे—"विष के मारने को विष महाबली है"—इसीलिए उन्होंने कई तरह के ज़हरों को साँप के विष में खरल करके, दिन-रात के परिश्रम के बाद, यह टिकिया तैयार की। जहाँ कहीं साँप, बिच्छू, कनखजूरा, मधुमक्खी, भिड़ या कोई दूसरा विषैला जानवर काट जाये, थूक अथवा पानी में घिसकर इसे लगा दीजिये। मिनटों में ज़हर का असर दूर हो जायेगा। (घंटी बजाता हुआ) जिस भाई को जरूरत हो हाथ उठाये। गुरु महाराज ने कहा था, "बेटा, जिन्दगी देना पर दाम न लेना !" इस टिकिया की कीमत लेना मेरे लिए हराम है ! (बैग से चन्द और टिकियाँ निकालता है।) जिस-जिस भाई को जरूरत हो हाथ उठाये।

[टिकिया बाँटने लगता है। धीरे-धीरे सबके सब हाथ उठा देते हैं।]

घंटीवाला (रुककर) आप सब लोगों ने हाथ उठा दिये (छोटे-छोटे दो लड़कों की ओर देखकर) यह कोई मिठाई की टिकिया नहीं, ज़हर की टिकिया है।

[लोग हँसते हैं—लड़के लज्जित होकर हाथ नीचे कर लेते है।]

मेहरबान! इस तरह काम नही चलेगा। उन लोगों को, जिन्हे दवा की जरूरत है, दूसरे लोगों से अलग करने का एक गुर श्री गुरु महाराज हमें बता गये हैं। (घंटी बजाते हुए) देखिए मेहरबान! इस टिकिया की कीमत चार आने है, इन्सान की जान का मोल लाखों रुपये से भी अधिक है, लेकिन उस जान को बचानेवाली इस टिकिया के दाम सिर्फ चार आने हैं। गुरु जी ने कहा था, "बेटा, जिन्दगी देना पर दाम न लेना।" दोस्तो! ये चार आने दाम नही, यह सिर्फ लागत है।' इस टिकिया की कीमत सिर्फ चार आने है, अब जिन सज्जनों को जरूरत हो हाथ उठायें।

[कुछ लोग हाथ गिरा देते हैं, कुछ इस असमंजस में हैं कि हाथ उठाये रखें या न रखें। उन्ही को संबोधित करके।]

: चार आने। इस टिकिया के दाम सिर्फ चार आने हैं। जिन्हे जरूरत हो वही हाथ उठायें।

[केवल पाँच-छह व्यक्ति हाथ उठाये रखते हैं, शेष गिरा देते हैं।]

: लाइए जनाब, चार-चार आने! (पैसे इकट्ठे करते हुए) लेकिन हाथ उठाये रखियेगा मेहरबान!

[सब पैसे इकट्ठे कर लेता है और बड़ी उदारता से मुस्कराता है।]

: (हाथ के पैसों को देखते हुए) देखिये, जिन मेहरबानों को जरूरत थी, उन्होंने दाम देकर भी दवा खरीद ली। दोस्तो! आपको

सचमुच जरूरत है। लीजिये, पैसे भी लीजिये और टिकिया भी लीजिये।

[जिन-जिन लोगों ने पैसे दिये थे, उनको पैसे और टिकिया दोनों देता है।]

घंटीवाला : (फिर अपनी जगह आकर उसी उदार मुस्कान के साथ) गुरु महाराज ने कहा था, "बेटा, जिन्दगी देना पर दाम न लेना।" (जोर से घंटी बजाते हुए) हाँ, तो मियाँ जी, आप ही इस मछली को लाये हैं न ?

टोपीवाला : जी, मैं ही लाया हूँ।

घंटीवाला : जिंदा लाये थे या मुर्दा ?

टोपीवाला : मुर्दा ?

घंटीवाला : (एक विचित्र आत्म-विश्वास के साथ) देख लीजिए जिंदा तो नहीं हो गयी।

टोपीवाला : (मछली को उठाकर वहीं रखते हुए) नहीं जी, मुर्दा है।

घंटीवाला : (भीड़ को संबोधित करके) मेहरबान ! गुसाईं तुलसीदास जी कह गये हैं "जो गुरु मिलें बिरंच सम मूरख हृदय न चेत..." कारण क्या है ? मेहरबान, यही कि मूर्ख को अपनी बात के अलावा किसी दूसरे की बात पर विश्वास नहीं होता और "अक्लमन्दा रा इशारा काफी अस्त।" (घंटी बजाता हुआ दायरे में चक्कर लगाता है।) विश्वास कीजिए मेहरबान, यह मछली जो इस वक्त इस टीन के डिब्बे में मुर्दा पड़ी है, जिंदगी की तड़प से उछल-उछल पड़ेगी। स्वयं गुरु महाराज अपनी जवानी में एक बार इसी मछली की तरह बेजान-से हो गये थे। उन्होंने स्वयं एक बार बताया था कि संन्यास लेने से बहुत पहले, बचपन की कुटेवों के कारण, जवानी ही में वे अपने पुरुषत्व का खात्मा कर बैठे थे। हकीमों-डाक्टरों से निराश होकर वे पहाड़ों की ओर निकल गये थे कि संभव है, उन्हें कोई पहुँचा हुआ संन्यासी मिल जाये तो उनकी आशा पूरी हो। सितम्बर, १८५२ की बात है मेहरबान ! वे गढवाल के प्रसिद्ध नगर कर्णप्रयाग में पहुँचे। वहाँ एक सराय में उन्हें एक देवता-स्वरूप साधु के दर्शन हुए, जिन्होंने न केवल उन्हें पुनः जीवन का दान दिया, बल्कि आयुर्वेद के प्रति वह अटूट श्रद्धा प्रदान की कि बाद में गुरु महाराज ने जनता की सेवा के लिए संन्यास

धारण कर लिया और हजारो बल्कि लाखो रोगियो को शक्तिशाली और वीर्य्यवान बनाकर उन्हें दोबारा जीवन की होड मे बाजी मारने के योग्य बना दिया। (बाइबिल सोसायटी की मेहराब पर लिखे हुए वाक्यो को देखकर) यीसू मसीह ने कहा, "उठ!" और कुमारी उठ बैठी! शायद उनके हाथ मे, उनके परस ही मे मसीहाई थी, उनके छूने ही से मुर्दे जी उठते थे, लेकिन यह भी कौन कह सकता है कि उनके पास कोई ऐसी ही अचूक दवा न होगी, जिससे मुर्दे तक जिंदा हो उठें। ऐसी ही दवा उस पहुँचे साधु ने गुरु महाराज को प्रदान की। (बैग से सुनहरी गोलियो की एक शीशी निकालता है।) यह वह अचूक दवा है! (घटी बजाकर) गढवाल की यात्रा की याद मे गुरु महाराज ने इनका नाम 'गढवाली गोलियाँ' रखा है। इन गोलियो के सेवन से स्वय गुरु महाराज न केवल १०५ वर्ष तक जीवित रहे, बल्कि वृद्धावस्था मे भी जवानो से अधिक शक्ति रखते थे। उनकी आँखो की ज्योति इतनी तेज थी कि दस फुट तो क्या, बीस फुट के फासिले से चार्ट पढ सकते थे और उनकी बत्तीसी मरते दम तक क़ायम रही। (ज़ोर-ज़ोर से घटी बजाता है।) न सिर्फ यह, बल्कि गुरु महाराज ने असली नुस्खे मे और कई जडी-बूटियाँ मिलाकर इसे सब तरह की कमजोरियो के लिए लाभदायक बना दिया है। कभी शरीर मे चोट लग जाय और आदमी कमज़ोरी महसूस कर रहा हो, आँखो मे अँधेरा छाया जा रहा हो और बेहोशी की हालत तारी हो" मेहरबान! गर्म दूध मे एक गोली घोलकर दीजिये, फौरन ताकत की लहर-सी शरीर मे दौड जायेगी! काम की ज्यादती या गिजा की कमी के कारण दिमाग़ कमजोर हो गया हो, रात को नीद न आती हो, स्मरणशक्ति मद पड गयी हो, चीजें रखकर भूल जाते हो, मस्तक मे हल्का दर्द रहता हो, नसें कमज़ोर हो गयी हो—सात दिन सुबह-शाम दूध के साथ इन गढवाली गोलियो का सेवन कीजिये और फिर देखिये कि यह दवा मसीहाई का असर रखती है या नही। फिर वो लोग, जो अपने बचपन या जवानी मे अपनी नादानी से अपने जीवन का अमोल रत्न गवा बैठे हो, जिन्हे जिंदगी से, खूबसूरती से, जवानी से नफरत हो गयी हो, जो शर्म से किसी से अपने दिल की बात न कह सकते हो, कमजोरी की घुन जिन्हे अदर-ही-अदर खाये

शीशियां मेरे पास सिर्फ नौ हैं। (चोटीवाले से) क्यों ब्रह्मचारी जी, आपको क्या जरूरत पड गयी?

चोटीवाला (खिन्न होकर) मेरे एक मित्र को चाहिए।

घटीवाला (जैसे अपने-आपसे) गुरु महाराज ने कहा था, 'बेटा, जिन्दगी देना पर दाम न लेना।" (जोर से) यह एक रुपया इन गोलियो की कीमत नही, सिर्फ लागत है। गढवाल के पहाडो से अनमोल जडी-बूटियां मॅगाकर यह दवा तैयार की जाती है। जनता के फायदे के लिए इसे महज लागत पर बांटा जा रहा है (एक बार जोर से घंटी बजाता हुआ दायरे म चक्कर लगाता है।) जिंदगी बख्शनेवाली इन तीस गोलियो की कीमत सिर्फ एक रुपया है। (क्षण-भर चुप खडा रहता है।) मैं फिर एक बार कहता हूँ, इस बार रुपया वापस न किया जायेगा।

[कोई हाथ नीचे नही गिरता।]

तो लाइये एक एक रुपया।

[रुपये इकट्ठे करता है।]

जिन मेहरबानो ने रुपया दिया है, वो कृपाकर अपने हाथ खडे रखें (तुर्की टोपीवाले से) मियां जी, देखिये इस बैग मे अगर एक शीशी और हो। (श्रोताओ से) मैंने अपने लिए रख छोडी थी, लेकिन गुरु महाराज कहा करते थे, "बेटा, किसी दूसरे की जान बच रही हो तो अपने प्राणो का मोह न करना।"

[मियां जी शीशी निकाल लाते हैं और वह सब शीशियां बांट देता है।]

मेहरबान, मैं आप लोगो का आभारी हूँ कि आपने इतना समय मुझे दिया। भगवान से मेरी यही प्रार्थना है कि यह सजीवनी आपको जीवन का सच्चा सुख प्रदान करे।

[बैग उठाकर चलने को होता है।]

चोटीवाला (शीशी को एक बार इधर-उधर से देखकर) परन्तु मुझे तो यह औषधि नही चाहिए।

कृपाणवाला लेकिन भाई, वह मछली

घटीवाला (जाते-जाते रुककर) गढवाली गोलियां पत्थर तक मे जान पैदा कर सकती हैं, फिर मछली तो चीज ही क्या है, लेकिन मेहर-

बान ! मछली दूध के साथ गोलियाँ नहीं निगल सकती। मियाँ जी ! चलिए, इसे हमारे औषधालय में ले चलिए, वहाँ हम नदी का स्वच्छ जल मँगायेंगे और यदि परमात्मा ने चाहा तो इसे अवश्यमेव जीवन प्रदान करेंगे।

[आगे-आगे बंग उठाये घटोवाला चलता है और पीछे-पीछे क्रीत दास की भाँति मियाँ जी हो लेते हैं।]

चोटीवाला : (कुर्ते की आस्तीनें चढ़ाता हुआ) मैं लुटेरे को मजा चखा दूँगा।

[भवें चढ़ाये उनके पीछे चला जाता है। भीड़ छँट जाती है। रंगमंच पर केवल सफेद दाढ़ीवाला रह जाता है। कुछ क्षण बाइबिल सोसायटी के मॉटो को देखता रहता है, फिर जैसे अपने-आप मुस्कराता है।]

दाढ़ीवाला : विश्वास पैदा करने की जरूरत है। चमत्कार क्या आज नहीं हो सकते !

[पर्दा गिरता है।]

देवदासी



गिरिराजशरण अग्रवाल

पात्र-परिचय

ज्योत्स्ना एक देवदासी कन्या
मुकाम्बा ज्योत्स्ना की माँ
चिदम्बरम एक साहसी युवक
वेंगलराव भू-स्वामी, उम्र ६० वर्ष
भानूरमन ज्योत्स्ना का पिता
पुरोहित और कई दूसरे

स्थान : दक्षिण कर्नाटक मे
गाँव : रामदुर्ग
समय : वर्तमान

[दृश्य आरम्भ होते ही एक भव्य मन्दिर सामने आता है जिसके सम्मुख एक अधेड़ जैसी दिखाई देने वाली महिला ज्योत्स्ना बैठी भीख माँग रही है। मन्दिर मे दर्शनार्थ आने-जाने वाले यात्री इसके सामने बिछी हुई चादर पर सिक्के डालकर आगे बढ़ जाते हैं। मन्दिर के मुख्य द्वार से बाहर आते हुए लगभग ४० वर्ष का युवक धीरे-धीरे चलकर ज्योत्स्ना के पास आकर ठहर जाता है—युवक का नाम चिदम्बरम है।]

चिदम्बरम : (भिखारिन को सम्बोधित करते हुए) माई ! तुम बता सकती हो, यहाँ एक देवदासी हुआ करती थी, बहुत ही सुन्दर-सी…।
ज्योत्स्ना : क्या नाम था भाई, उसका…।
चिदम्बरम : घर का नाम तो उसका दुर्गावा था, किन्तु देवदासी बनने के बाद…।
ज्योत्स्ना : तुम कितने समय पहले की बात कर रहे हो भाई ?
चिदम्बरम : (सोचते हुए) यही कोई तीस साल पहले की…।
ज्योत्स्ना · (आश्चर्य से) तीस साल पहले की ! तीस साल तक तुम इस मन्दिर में नही आए। कहाँ चले गये थे तुम ?
चिदम्बरम दुर्गावा को देवदासी बनाया जा रहा था, जिस समय मैं दुःखी होकर गाँव से चला गया था माई !
ज्योत्स्ना : कौन-सा गाँव था तुम्हारा ?
चिदम्बरम : रामदुर्ग।
ज्योत्स्ना : बैठ जाओ भाई। मैं तुम्हारी बात अभी सुनूँगी।
चिदम्बरम : (ज्योत्स्ना के निकट जमीन पर बैठते हुए) तुम्हारा क्या नाम है माई ?

[दुर्गावा कोई उत्तर नही देती, और अपने सामने पड़े सिक्के गिनने मे व्यस्त हो जाती है]

ज्योत्स्ना · तो तुम रामदुर्ग के रहने वाले हो, दुर्गावा भी रामदुर्ग की रहने वाली थी। लेकिन तीस साल तक तुम कहाँ रहे भाई ! बहुत जल्दी याद आई तुम्हें दुर्गावा की…।
चिदम्बरम : माई ! जब दुर्गावा देवदासी बनी, मैं बहुत विचलित हो गया था, पागल-सा हो गया था।
ज्योत्स्ना : क्या तुम प्यार करते थे दुर्गावा से…?
चिदम्बरम : हाँ, माई ! बहुत अधिक …।
ज्योत्स्ना : तब तुम उसे छोड़ कर क्यो गये ?
चिदम्बरम : स्थिति ऐसी ही उत्पन्न हो गई थी माई ! मैं अकेला देवदासी-प्रथा और उसके मानने वालों से टकरा नही सकता था। उन दिनों मैं बहुत छोटा था केवल चौदह साल का। बहुत-सी चीज़ों को मैं समझता भी नही था तब…लेकिन मुझे लगता था जैसे दुर्गावा के साथ अन्याय हो रहा हो, नरक मे झोंका जा रहा हो उसे…।
ज्योत्स्ना : और तुम यह सब देख सके। फिर छोड़कर भाग गए।

[बीच-बीच में मन्दिर में आने वाले दर्शक चादर पर सिक्के डालते जाते हैं और बातचीत का क्रम टूट-टूट जाता है।]

चिदम्बरम — हाँ! मैं विशाखापटनम चला गया था।

ज्योत्स्ना — विशाखापटनम! वहाँ क्या करते थे ?

चिदम्बरम — बहुत से काम किए भाई कई वर्ष एक मोटर वर्कशाप में क्लीनर बनकर रहा। अब मैकेनिक हो गया हूँ।

ज्योत्स्ना — क्या तीस बरस तक इस मन्दिर के दर्शनों को नहीं आए। अपने गाँव रामदुर्ग भी नहीं गए।

चिदम्बरम — नहीं।

ज्योत्स्ना — क्या? क्या दुर्गावा की याद नहीं आई, इतने दिन तक ?

चिदम्बरम — याद तो बहुत आती थी उसकी। लेकिन वह तो देवदासी बन चुकी थी। उसका विवाह तो देवी येलम्मा के साथ कर दिया गया था, अब मेरा अधिकार ही क्या था उस पर ?

ज्योत्स्ना — आते तो कभी यो ही मिलने के लिए आ जाते।

चिदम्बरम — क्या करता? वह जो था भू स्वामी बगलराव, जिसके पुरखे कभी औरंगाबाद से आकर यहाँ बस गए थे उसी ने सारा खर्च उठाया था दुर्गावा के ब्याह का।

ज्योत्स्ना — (उदास स्वर में) उसे विवाह न कहो भाई। दासता का एक फंदा कहो जो उस समय मेरी गर्दन में डाल दिया गया था, जब मैं केवल दस वर्ष की थी।

चिदम्बरम — हाँ! वह दासता का एक फंदा ही था। तुम ठीक कहती हो।

ज्योत्स्ना — क्या तुम्हारा नाम चिदम्बरम तो नहीं है भाई?

चिदम्बरम — हाँ! लेकिन तुम मुझे कैसे जानती हो?

ज्योत्स्ना — दुर्गावा ने बताया था मुझे तुम्हारे बारे में।

चिदम्बरम — (जिज्ञासा से) दुर्गावा कहाँ है?

ज्योत्स्ना — यदि वह तुम्हें मिले तो क्या तुम उसे पहचान पाओगे?

चिदम्बरम — क्यों नहीं! जब दुर्गावा देवदासी बनी थी, दस साल की थी, अब चालीस साल की हो गई होगी, मैं बयालीस साल का हूँ। लेकिन अगर वह मुझे मिले तो मैं तुरन्त उसे पहचान जाऊँगा।

ज्योत्स्ना — समय बहुत ही क्रूर होता है भाई। वह सारा रूप-सौंदर्य मिटा देता है, प्रेमी तो क्या कभी कभी तो माँ-बाप भी नहीं पहचान पाते अपने बच्चों को।

चिदम्बरम — लेकिन मेरे दिल में तो उसका चित्र आज भी उतना ही नया है

जितना पहले था, वह मिले तो मैं एक ही झलक में पहचान लूंगा उसे।

ज्योत्स्ना : कठिन लगता है, बहुत कठिन।

चिदम्बरम : लेकिन, तुम मुझे बताओ तो सही, वह है कहाँ ?

ज्योत्स्ना : क्या करोगे पूछकर ? अब तो सब कुछ समाप्त हो गया है। (ठण्डी साँस भर कर) वह भी अब मेरी तरह बूढ़ी हो चुकी होगी, समय से पहले ही—भीख माँग रही होगी कहीं, किसी मन्दिर के पास।

चिदम्बरम : ऐसा न कहो माई ! मुझे दुःख होता है, यह सुनकर।

ज्योत्स्ना : दुःख किस बात का है भाई ! सभी देवदासियों का अन्त यही होता है, यही भाग्य है उनका।

चिदम्बरम : मुझे तो अब यह भी पता नहीं, उसके परिवार में अब कौन-कौन है। चार बहनें थी वह। दुर्गाबा सबसे छोटी थी। भगवान जाने अब वह सब कहाँ होंगे···?

ज्योत्स्ना : क्यों, तुम यहाँ से लौटकर रामदुर्ग नहीं जाओगे ?

चिदम्बरम : जाता ! लेकिन अब वहाँ जाकर क्या लूंगा ? दुर्गाबा होती तो चला जाता।

ज्योत्स्ना : तुम्हारे माँ-बाप नहीं रहे क्या ?

चिदम्बरम : पता नहीं !

ज्योत्स्ना : शादी तो तुमने कर ली होगी ?

चिदम्बरम : नहीं की !

ज्योत्स्ना : क्यों नहीं की ?

चिदम्बरम : बस यों ही ! दुर्गाबा के बाद मुझे कोई लड़की भायी ही नहीं। सारा जीवन उसकी याद में गुजार दूंगा भाई···।

ज्योत्स्ना : और अगर वह तुम्हें तब भी न मिली तो···।

चिदम्बरम : ना मिले ! कोई चिन्ता नहीं। मेरे लिए वह तब ही निषिद्ध हो गई थी, जब देवदासी बनाई गई थी। अब तो केवल उसकी याद है और उसकी कल्पना। यहाँ आया तो सोचा उसके सम्बन्ध में पूछताछ कर लूं। वह जीवित है या नहीं।

ज्योत्स्ना : जीवित है।

चिदम्बरम : क्या तुम मुझे उसका पता बता सकती हो, वह है कहाँ ?

ज्योत्स्ना : आज नहीं, कल आओ तो पूछना···।

[चिदम्बरम उठकर चल देता है और मन्दिर में आए

दर्शनार्थियों की भीड में मिल जाता है। ज्योत्स्ना मन्दिर की दीवार से टेक लगा कर बैठ जाती है। उसके मस्तिष्क पर अतीत के सारे चित्र एक-एक करके उतरने लगते हैं।]

[फ्लैश बैक मे]

[दुर्गाबा का छोटा-सा घर। भानूरमन अपनी पत्नी मुकाम्बा से वार्ता कर रहा है।]

भानूरमन मुकाम्बा ! बेटा तो तेरे पैदा हुआ ! यह और बात है कि भगवान ने उसे वापस ले लिया। लेकिन जो प्रण हमने किया था, वह तो पूरा करना ही चाहिए ।

मुकाम्बा प्रण पूरा करने से क्या होगा, जब बेटा रहा ही नही।

भानूरमन होगा क्यो नही, भगवान और बेटा देगा।

मुकाम्बा मुझे तो कुछ सूझ नही रहा है।

भानूरमन सूझ क्यो नही रहा है ? हमने प्रण किया था कि अगर अबके तेरे पेट से बेटा जन्मेगा तो हम दुर्गाबा को देवी येलम्मा के चरणो मे भेंट करेंगे।

मुकाम्बा देवी से उसका ब्याह होगा ना ··वह देवदासी बनेगी।

भानूरमन हाँ।

मुकाम्बा लेकिन ब्याह के लिए हमारे पास धन कहाँ है ? हजार-डेढ़ हजार रुपया तो लगता ही है। कहाँ से आएगा इतना धन ?

भानूरमन दुर्गाबा कोई पहली देवदासी नही बनेगी, यह तो ऐसी प्रथा है, जिसके लिए धन मिल ही जाता है।

मुकाम्बा तुमने किसी से बात की है क्या ?

भानूरमन हाँ। बेंगलराव से कहा था। दुर्गाबा सुन्दर है, युवा होगी तो देखना कैसी अच्छी निकलती है। वह तो दुर्गाबा के बारे मे सुनते ही तैयार हो गया।

मुकाम्बा लेकिन मेरी इच्छा नही है।

भानूरमन क्या ?

मुकाम्बा जब बेटा जीवित नही रहा तो हम देवी को दिया वचन पूरा क्यो करें ?

भानूरमन (डरते हुए) अधर्म की बात मत कर मुकाम्बा ! देवी श्राप देगी तो सब कुछ नष्ट हो जाएगा। सारा कुल।

मुकाम्बा श्राप क्यो देगी, जब बेटा जिया ही नही।

भानूरमन : देख मुकाम्वा। अधर्मियों की भाँति मत बोल। देवी प्रसन्न होगी तो वेटा और भी होगा। तू तो बस दुर्गावा के व्याह की तैयारी कर। उसे तो देवदासी बनाना ही होगा। माँ चेलम्मा के चरणों में भेंट करना ही होगा उसे।

मुकाम्वा : (कुछ सोचते हुए) दस वर्ष की हो गई है दुर्गावा, अब पाँच साल पहले पैदा हुआ था वेटा, जो एक ही वर्ष बाद चल बसा था। इस बात को भी चार साल बीत गए। अब क्या आशा है पुत्र पैदा होने की।

भानूरमन : आशा क्यों नहीं ! देवी चाहे तो क्या नहीं हो सकता ?

मुकाम्वा : चाहे तब ना।

भानूरमन : चाहेगी क्यों ? जब तू अपना वचन ही पूरा नहीं कर रही है ?

मुकाम्बा : वचन मेरा नहीं, तुम्हारा था।

भानूरमन : तो मैं ही अपना वचन पूरा भी करूँगा। मुझे विश्वास है अगर वचन पूरा न हुआ तो देवी का प्रकोप होगा हम सब पर, तू भी उससे नहीं बच सकेगी।

मुकाम्वा : (कुछ सोचते हुए) अच्छा तो फिर पुरोहित से मिलकर तिथि तय कर लो। बेंगलराव से भी बात पक्की कर आओ। विवाह का सारा खर्च तो वही देगा ना।

भानूरमन : हाँ !

[दृश्य-परिवर्तन]

[दुर्गावा और चिदम्बरम गाँव के निकट एक झील के किनारे गम्भीर मुद्रा में बैठे हैं। झील में इक्का-दुक्का जल पक्षी तैर रहे हैं। आसपास ताड़ और नारियल के वृक्ष दिखाई दे रहे है।)

दुर्गावा : तुझे पता है चिदम्बरम ! मेरा ब्याह होने को है।

चिदम्बरम : (चौंकते हुए) विवाह ? किससे ?

दुर्गावा : देवी चेलम्मा से।

चिदम्बरम : देवी चेलम्मा से। तुम देवदासी बनाई जा रही हो ?

दुर्गावा : हाँ।

चिदम्बरम : ब्याह कौन करेगा ?

दुर्गावा : बेंगलराव।

चिदम्बरम : बेंगलराव ! तब तो तू मन्दिर की भेंट चढ़ा दी जाएगी, अर्पित कर दी जाएगी, माँ चेलम्मा के चरणों में।

दुर्गाबा : हाँ। पर मुझे तो बहुत डर लगता है चिदम्बरम।
चिदम्बरम : फिर तू विद्रोह क्यों नहीं कर देती?
दुर्गाबा : विद्रोह कैसे कर सकती हूँ चिदम्बरम! देवी का प्रकोप जो होगा सारे परिवार पर। हम नष्ट हो जाएँगे।
चिदम्बरम : क्यों नष्ट हो जाएँगे?
दुर्गाबा : बापू ने देवी येलम्मा को वचन दिया था कि अगर उसके यहाँ बेटा पैदा होगा तो मुझे देवी को अर्पित करेंगे।
चिदम्बरम : लेकिन बेटा तो मर भी गया।
दुर्गाबा : पर इससे क्या होता है, हुआ तो।
चिदम्बरम : यह तो देवी की दया न हुई, कोप हुआ।
दुर्गाबा : ऐसा न कहो चिदम्बरम, ऐसा न कहो, यह अधर्म है, तुम्हें पाप लगेगा, देवी श्राप देगी।
चिदम्बरम : पर एक बात तो बता दुर्गाबा। अछूत जाति की कन्याएँ ही देवदासी क्यों बनती हैं, सवर्ण जाति की लड़कियाँ क्यों नहीं बनती?
दुर्गाबा : मुझे क्या पता चिदम्बरम?
चिदम्बरम : पता क्यों नहीं दुर्गाबा, देवी येलम्मा का जो रूप है, उसमें तो अछूत और सवर्ण दोनों की आत्माएँ निहित हैं, दोनों का मिलाप हुआ है माँ येलम्मा में।
दुर्गाबा : अच्छा! वह कैसे?
चिदम्बरम : तू नहीं जानती दुर्गाबा?
दुर्गाबा : नहीं।
चिदम्बरम : वह जो ऋषि थे ना, महाराज जमदग्नि, एक बार उनकी पत्नी रेणुका नदी स्नान को गईं।
दुर्गाबा : अच्छा! फिर क्या हुआ?
चिदम्बरम : वहाँ रेणुका स्नान करते समय गंधर्व पर मोहित हो गईं।
दुर्गाबा : मोहित हो गईं?
चिदम्बरम : हाँ, काम-पिपासा जाग उठी उसमें।
दुर्गाबा : (आश्चर्य से) अच्छा! फिर क्या हुआ?
चिदम्बरम : ऋषि जमदग्नि ने अपनी दिव्य शक्ति से भाँप लिया इस स्थिति को, देख लिया सब कुछ।
दुर्गाबा : देख लिया?
चिदम्बरम : हाँ! तब ऋषि जमदग्नि क्रोधित हो उठे। उन्होंने अपने पुत्र को आदेश दिया कि वह अपनी माँ का सिर तलवार से अलग कर दे।

दुर्गावा : अरे ! इतनी-सी भूल का इतना बड़ा दंड।

चिदम्बरम : किन्तु बेटे ने पिता की आज्ञा मानने से इन्कार कर दिया।

दुर्गावा : उसने ठीक किया चिदम्बरम। क्या ठीक नहीं किया उसने ?

चिदम्बरम : अभी आगे तो सुन दुर्गावा ! बड़े बेटे से निराश होकर ऋषि ने अपने मंझले बेटे को आज्ञा दी कि वह अपनी पापिन माँ का सिर धड़ से अलग कर दे। लेकिन उसने भी अपने बाप का आदेश ठुकरा दिया।

दुर्गावा : (रुचि लेते हुए) अच्छा, फिर ऋषि ने क्या किया चिदम्बरम ?

चिदम्बरम : तब ऋषि ने अपने छोटे बेटे को आदेश दिया और छोटे बेटे परशुराम ने बाप के आदेश का पालन करते हुए अपनी माँ का सिर काट डाला।

दुर्गावा : अरे ! बड़ा ही क्रूर था परशुराम।

चिदम्बरम : अब यह कहना तो मुश्किल है कि परशुराम क्रूर था या आज्ञाकारी।

दुर्गावा : क्रूर ही कहा जाएगा उसे।

चिदम्बरम : नहीं, क्रूर नहीं ! क्योंकि ऋषि जमदग्नि ने प्रसन्न होकर जब उससे तीन वर माँगने को कहा, इस पर परशुराम ने अपनी माँ को पुनः जीवित करने का वर माँगा।

दुर्गावा : अच्छा तो क्या ऋषि ने उसे जीवित कर दिया ?

चिदम्बरम : हाँ। लेकिन पहले जैसी स्थिति में नहीं। ऋषि ने बेटे से कहा, कि पहले वह किसी शूद्र महिला का सिर काटकर अपनी माँ के धड़ पर लगाए। परशुराम ने ऐसा ही किया। तब रेणुका जी उठी। किन्तु एक ऐसे आकार में जिसका धड़ रेणुका का था और सिर मातंगी का।

दुर्गावा : सिर मातंगी का ?

चिदम्बरम : हाँ, तब ऋषि ने आशीर्वाद दिया कि यह देवी येलम्मा सदैव जीवित रहेगी और प्रति वर्ष इसके चरणों में कुँवारी कन्याएँ अर्पित होती रहेंगी। इस प्रकार शूद्र रक्त और सवर्ण रक्त एक-दूसरे में सम्मिलित हो गया। दोनों एक-रूप हो गये।

दुर्गावा : एकरूप तो हो गये, चिदम्बरम ! लेकिन यह क्यों होता है कि शूद्र जाति की कन्याएँ ही देवी पर चढ़ाई जाती हैं, सवर्ण जाति की नहीं।

चिदम्बरम : हाँ यह क्यों होता है दुर्गावा, पता नहीं ऐसा क्यों होता है।

दुर्गावा : मुझे तो ऋषि के प्रति आस्था नहीं है चिदम्बरम।

चिदम्बरम मुझे भी नही दुर्गाबा, ऋषि के कारण ही हर वर्ष कितनी ही निर्दोष कन्याएँ देवदासी बना दी जाती हैं, जो सारा जीवन वेश्यावृत्ति करके पेट पालती हैं।

दुर्गाबा मुझे तो बहुत डर लगता है चिदम्बरम।

चिदम्बरम : चल, यहाँ से भाग लें।

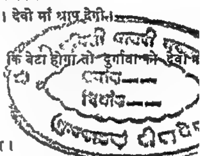
दुर्गाबा : कहाँ?

चिदम्बरम कही भी, गुलबर्गा, मैसूर, विशाखापटनम, कही भी, किसी भी बडे शहर मे। मैं काम करके पैसे कमाऊँगा, तू मेरे साथ रहना बडे होकर हम शादी कर लेगे।

दुर्गाबा : ऐसा न कह चिदम्बरम। देवी माँ श्राप देगी।

चिदम्बरम : क्यो श्राप देगी?

दुर्गाबा : बापू ने बोला था ना, कि बेटा होगा तो दुर्गाबा को देवी मे चढाएँगे।



चिदम्बरम : फिर बेटा कहाँ हुआ?

दुर्गाबा : हुआ था।

चिदम्बरम : लेकिन वह तो मर गया।

दुर्गाबा : इससे क्या होता है। प्रण तो पूरा करना ही होगा।

चिदम्बरम : प्रण पूरा करने का परिणाम जानती हो क्या होगा, दुर्गाबा।

दुर्गाबा : क्या होगा?

चिदम्बरम : तेरा ब्याह पत्थर की उस मूर्ति से कर दिया जायेगा, येलम्मा से। युवा होने पर तेरे साथ पहला सहवास वही व्यक्ति करेगा, वेंगलराव जो ब्याह का खर्च उठा रहा है। फिर साल-दो साल बाद वह तुझे छोड देगा, तब तू दर-दर की ठोकरे खाने और अपनी देह बेचने पर विवश होगी।

दुर्गाबा : (डरते हुए) ऐसा न कह चिदम्बरम! ऐसा न कह!

चिदम्बरम कहने की बात नही है दुर्गाबा। देखती नही है हर साल देवदासी बनी कितनी ही कन्याएँ वेश्याएँ बन जाती हैं। उनकी रक्षा न देवी करती है न समाज।

दुर्गाबा : हाँ। तू ठीक कहता है चिदम्बरम।

चिदम्बरम मेरी बात मान दुर्गाबा, और यहाँ से निकल चल। मैं आठवी कक्षा तक पढा हूँ, कही छोटी-मोटी नौकरी कर लूँगा, तू मेरे साथ रहना। नही तो वह मोटा वेंगलराव तुझे फाडकर खा जाएगा एक दिन।

दुर्गाबा मुझे तो बहुत डर लगता है चिदम्बरम।

चिदम्बरम : किससे ?

दुर्गावा : देवी से। देवी का प्रकोप होगा तो बापू संकट में पड़ जाएगा। नाश हो जाएगा सारे परिवार का।

चिदम्बरम : लेकिन मैं तुझे देवदासी बनते नहीं देख सकता दुर्गावा। मैं नहीं देख सकता। मैं उससे पहले कहीं चला जाऊँगा।

दुर्गावा : कहाँ चला जायेगा चिदम्बरम ?

चिदम्बरम : कहीं भी।

[क्षण-भर के लिए फिर वही दृश्य सामने आता है, जहाँ मन्दिर की दीवार से पीठ सगाए ज्योत्स्ना आँखें मूँदे अतीत की घटनाएँ याद कर रही है। दर्शनार्थियों की भीड़ मन्दिर में आ रही है। कीर्तन-भजन की आवाज़ों का शोर है, ज्योत्स्ना को वह दिन याद आता है, जब उसे देवदासी बनाया गया था।]

[दृश्य-परिवर्तन]

पुरोहित : (संगीत की धुन और ढोलक की आवाज़ के बीच) दुर्गावा को स्नान कराया जाए।

भानूरमन : (आवाज़ देता है) दुर्गावा ! दुर्गावा।

मुकाम्बा : लाती हूँ अभी। दो पल रुक जा।

भानूरमन : विलम्ब मत कर मुकाम्बा, जल्दी कर।

मुकाम्बा : दुर्गावा बहुत रो रही है जी। सँभालना मुश्किल हो गया है उसे।

भानूरमन : अभी बच्ची है ना, बिलकुल नासमझ।

मुकाम्बा : हाँ, वह जानती ही नहीं, क्या हो रहा है ?

भानूरमन : उसे समझा। उसे बता कि यह तो हर्ष का दिन है, उसका विवाह देवी येलम्मा से हो रहा है, वह धन्य है, भाग्यशाली है।

[मंत्र ध्वनियों के बीच दुर्गावा खींचकर लाई जाती है। वह चीख रही है। महिलाएँ उसके वस्त्र उतारती हैं और स्नान कराती हैं।]

पुरोहित : इसके शरीर पर उबटन लगाओ।

भानूरमन : मुकाम्बा सुन ले। जल्दी कर।

पुरोहित : स्नान के उपरान्त वस्त्र नहीं पहनाने हैं इसे।

भानूरमन : और क्या होगा, महाराज।

पुरोहित : माँग में सिन्दूर भरकर बाल खुले छोड़ दो।

मुकाम्बा अच्छा।

[सगीत और ढोलक की आवाज ऊँची हो जाती है।]

पुरोहित कन्या के शरीर को सुगन्ध सामग्री से युक्त करके गुप्तागो को नीम के पत्तो से ढाँप दो।

मुकाम्बा अच्छा जी।

पुरोहित वस्त्र नही पहनाना कन्या को।

[महिलाएँ नीम के पत्तो की झालर दुर्गाबा की कमर के चारो ओर लटका देती है।]

महिलाएँ तैयार हो गई है महाराज कन्या।

पुरोहित ले चलो, माँ चेलम्मा के मन्दिर।

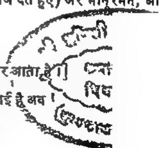
[सगीत की तेज धुन के बीच दुर्गाबा मन्दिर के लिए रवाना हो जाती है। आगे पुरोहित है और पीछे औरता-मर्दों का जुलूस।

[क्षण भर के लिए फिर वही दृश्य सामने आता है जहाँ ज्योत्स्ना मन्दिर की दीवार से पीठ लगाए आँखें मूदे विचारो म लीन है। मन्दिर म भक्त आ जा रहे हैं। कीर्तन भजन की आवाजे वातावरण म गूज रही है। ज्योत्स्ना के मस्तिष्क म एक और दृश्य उभरता है।]

बेंगलराव (दुर्गाबा के द्वार पर आवाज देते हुए) अरे भानूरमन, ओ भानरमन!

भानूरमन अच्छा सरकार! आया!

[भानूरमन द्वार पर आता है।]



बेंगलराव कन्या पन्द्रह वर्ष की हो गई है अब!

भानूरमन हाँ सरकार, हो गई।

बेंगलराव लो यह वस्त्र और गहने।

भानूरमन अच्छा सरकार।

बेंगलराव और देख शाम तक विदा कर दे बेटी को, अब वह तेरी बेटी दुर्गाबा नही, देवदासी है। क्या नाम दिया था पुरोहित ने उसे।

भानूरमन ज्योत्स्ना, महाराज!

[बेंगलराव जाता है। लडकियाँ और मुकाम्बा, ज्योत्स्ना

को नये वस्त्र और गहने पहनाकर वेंगलराव के यहाँ भेजने को तैयार करती हैं।]

ज्योत्स्ना : मैं नहीं जाऊँगी माँ, मैं नहीं जाऊँगी वेंगलराव के यहाँ।

मुकाम्बा : जाएगी क्यों नहीं, बेटी, तुझे तो जाना ही होगा, अब यही तो तेरा धर्म है।

ज्योत्स्ना : (चीखकर) मैं नहीं जाऊँगी, मैं नहीं जाऊँगी माँ ! यह धर्म नहीं पाप है।

मुकाम्बा : ऐसा मत बोल, ज्योत्स्ना ऐसा मत बोल। तेरा विवाह देवी से हुआ है। देवी के आदेश का पालन करना है तुझे।

ज्योत्स्ना : (चीखते हुए) बापू, बापू ! मुझे बचा, नरक में मत झोंकने दे। मैं नहीं जाऊँगी वेंगलराव के पास।

भानूरमन : मूर्ख मत बन ज्योत्स्ना, जो परम्परा है, उस पर बनी रह। देवी का कोप हुआ तो तेरे साथ हमारा भी नाश होगा।

ज्योत्स्ना : (रोते हुए) लेकिन वेंगलराव कब तक मुझे रखेगा ? साल-दो साल बाद निकाल बाहर करेगा।

भानूरमन : (हँसते हुए) अरी पगली ! जीवन-भर वह तुझे रख भी कैसे सकता है। तेरा विवाह उससे नहीं देवी से हुआ है।

ज्योत्स्ना : फिर मैं उसके यहाँ क्यों जाऊँ ?

भानूरमन : देवी इससे प्रसन्न होगी। तुझ पर दया करेगी।

ज्योत्स्ना : (क्रोध में) तू इसे दया कहता है बापू ! दो-तीन बरस बाद वेंगलराव मुझे घर से बाहर निकाल फेंकेगा। फिर मैं अपनी देह बेचकर अपना पेट भरने के लिए विवश कर दी जाऊँगी। और फिर एक समय आएगा बापू, जब मुझे कोई पूछने वाला नहीं होगा। मैं समय से पहले ही बूढ़ी हो जाऊँगी, और मन्दिर के सामने बैठकर इसी तरह भीख माँगा करूँगी, जिस तरह और बहुत-सी देवदासियाँ भीख माँगती हैं।

भानूरमन : (पत्नी को आवाज देते हुए) मुकाम्बा, अरी ओ मुकाम्बा ! इसे समझा, यह क्या अधर्म बक रही है। और जल्दी तैयार कर इसे जाने के लिए दिन छुपने से पहले ही।

[ज्योत्स्ना ज़ोर-ज़ोर से रोती है और ढोलक की थाप के बीच वेंगलराव के घर के लिए विदा कर दी जाती है।

[दृश्य में फिर वही मन्दिर है, जहाँ ज्योत्स्ना सफेद चादर बिछाए मन्दिर में जाने वाले से भीख ले रही है। अचानक

चिदम्बरम उसके पास आकर पालथी मारकर बैठ जाता है।]

चिदम्बरम : क्यों भई ! कुछ पता चला दुर्गाबा का।

ज्योत्स्ना : हाँ।

चिदम्बरम : (उतावले मन से) कहाँ है वह, मुझे बता कहाँ है वह ?

ज्योत्स्ना वह तेरे सामने हो तो क्या तू उसे पहचान जाएगा ?

चिदम्बरम : हाँ, एकदम।

ज्योत्स्ना : (कुछ सोचते हुए) समय के हाथ इतने क्रूर होते हैं चिदम्बरम कि कभी-कभी समय से पहले ही चेहरे का रूप बिगाड देते हैं, इतना बिगाड देते हैं कि माँ-बाप अपनी सन्तान और प्रेमी अपनी प्रेमिका को नही पहचान पाते।

चिदम्बरम : कैसी बात करती है माई ?

ज्योत्स्ना : (आवेश मे) बात नही चिदम्बरम ! मैं सच कह रही हूँ। तू मुझे देख रहा है, लेकिन पहचानता नही। (चीखकर) मैं वही दुर्गाबा हूँ, वही दुर्गाबा, जिसे देवदासी बनाकर पुरोहित ने ज्योत्स्ना का नाम दिया था।

चिदम्बरम : (चिल्लाता है) क्या हाल हुआ है तेरा, कितनी जल्दी बूढ़ी हो गई तू ?

ज्योत्स्ना · हाँ चिदम्बरम ! बहुत लम्बी यात्रा तय की है, जीवन की, बहुत थक गई हूँ।

चिदम्बरम : थक गई है ?

ज्योत्स्ना : हाँ, देवदासी बनने की क्रिया से बेंगलराव की रखैल बनने और भीख माँगने तक बहुत लम्बी यात्रा थी वह (रोने लगती है) तू कहाँ रहा इतने दिन।

चिदम्बरम : मेरी मत पूछ दुर्गाबा। मैं उसी दिन गाँव से चला गया था, जब तुझे देवदासी बनाया गया था।

ज्योत्स्ना : और अब जब तू आया है, तो इतनी देर हो चुकी है, इतनी देर हो चुकी है अब !

चिदम्बरम : बहुत अधिक देर नही हुई है दुर्गाबा ! बहुत देर नही हुई, चल यहाँ से। निकल इस नरक से।

ज्योत्स्ना (धीरे से) अब मुझ मे क्या रह गया है, चिदम्बरम, रोग और दुर्बलता की मारी देह।

चिदम्बरम : रोग, दुर्बलता और थकन ?

ज्योत्स्ना : हाँ।

चिदम्बरम : चल ! यह सब मुझे दे, मैं तुझे साहस दूँगा, प्यार दूंगा और तू देखेगी कि हम दोनों मिलकर इतना चीखेंगे, इतना चीखेंगे कि आगे कोई पुरोहित किसी कन्या को कोई देवदासी बनाने की हिम्मत न करे ।

[दृश्य में दोनो एक-दूसरे से गले मिलते हैं और संगीत की धुन तेज हो जाती है ।]

[पर्दा गिरता है]

ख़ज़ाने का साँप



चिरजीत

पात्र परिचय

श्रीकान्त	खिलाडियो जैसे डील-डौल वाला एक पढा-लिखा छबीला नौजवान, कमला का पति।
कमला	श्रीकान्त की युवा पत्नी और एक बूढे सेठ की इकलौती लड़की।
भील और सरजू	पुराने नौकर, आयु ३५-४० वर्ष।
सँपेरा और ड्राइवर	बिना नाम के 'टिपिकल प्राणी'।

समय : रात के साढे नौ बज चुके हैं।
स्थान दिल्ली से कोई सात-आठ मील की दूरी पर एक जगल मे एक पुरानी बावली।

[जगल के बीच थोडी सी खुली जगह। सामने की ओर थाई लगे पुराने पत्थरों की बनी हुई बावली की ऊँची टूटी-फूटी मुंडेर, जिसमे बिना किवाडो का एक मेहराबदार दरवाजा बना हुआ है। इसी दरवाजे से नीचे बावली मे सीढ़ियाँ जाती हैं। दायी ओर एक टेंट लगा हुआ है। बायी ओर घने वृक्षो मे से एक ऊबड-खाबड-सा रास्ता जगल मे बाहर जाता है। यहो, ज़रा आगे की ओर, अलाव जल रहा है, जिसकी लपटें रात के घटाटोप अधकार को भेदने का असफल प्रयास करती हुई बावली

की टूटी-फूटी मुँडेर पर अनजानी आकृतियों की छाया-लीला का सृजन कर रही हैं। यह अलाव उन वन्य-पशुओं को दूर भगाने के उद्देश्य से भी प्रज्ज्वलित किया गया है, जिनका स्वर नेपथ्य मे रह-रहकर गूँज उठता है।

जब पर्दा उठता है, तो नीचे बावली से सँपेरे की बीन का लहरीला स्वर उठता हुआ मन्द-मन्द सुनाई देता है। मुँडेर का किंचित् प्रकाशित दरवाज़ा इस बात का सूचक है कि नीचे बावली में सँपेरे के पास गैस-लैम्प जल रहा है। इस दरवाज़े के पास एक पत्थर पर चुस्त निक्कर और कमीज पहने हुए श्रीकान्त बैठा है। उसकी नज़र हाथ की घड़ी पर और कान बीन के स्वर पर लगे हैं। उसके पास एक दोनाली बन्दूक और बड़ी टार्च रखी है। दायी ओर लगे हुए टैंट मे बिलकुल अँधेरा है। श्रीकान्त, कुछ देर बाद, बीन के स्वर पर फनियर साँप की तरह झूमता हुआ-सा उठता है और हर्षित-सा अलाव की ओर बढ़ता है।]

श्रीकान्त : (स्वगत) अहा! क्या कमाल की मस्तानी बीन बजा रहा है यह सँपेरा! जी हाँ, सुनकर बावली का साँप क्या, धुर पाताल में शेषनाग भी झूम उठा होगा। (सहसा वनपथ की ओर निहारते हुए) लेकिन···लेकिन···वह सरजू अभी तक शहर से क्यों नही आया?

[तभी सहसा टैंट के अन्दर कुछ हलचल-सी होती है और भीखू का भयभीत स्वर सुनाई देता है, "साँप! साँप!!"]

: (सहर्ष, बावली के द्वार की ओर लपकते हुए) तो क्या बावली से साँप निकल आया?

भीखू : (टैंट के अन्दर से) सरकार, मुझे बचाइये। साँप ने मुझे जकड़ रखा है इस टैंट में।

श्रीकान्त : (पुकार की ओर ध्यान न देते हुए, सहर्ष) अहा, कैसी सफल रही मेरी योजना! जी हाँ, सँपेरे ने बीन बजाई और खज़ाना छोड़कर साँप बावली से बाहर। (खुशी से) अहा, आज मैं लख-पति बन गया, करोड़पति बन गया, अरबपति बन गया, जी हाँ!

भीखू : (टैंट के अन्दर जैसे दम तोडते हुए) मुझे बचाइए, सरकार, सांप से ।

श्रीकान्त (टैंट के पास जाकर) अरे, क्यो चिल्ला रहा है, भीखू ? इस मूजी सांप को यही उलझाये रख, जी हाँ । मैं कुदाल और रस्सा लेकर बावली मे कूदता हूँ और और (एकाएक बावली के द्वार की ओर पलटकर) यह बीनवाला भी एकदम गधा है । जी हाँ, सांप बावली से निकलकर यहाँ आ गया, और वह अभी तक नीचे सीढियो पर बैठा बीन बजाये जा रहा है । (ज़ोर से पुकारते हुए) अरे जोगी महाराज, बीन बन्द करो, और जल्दी से ऊपर आओ । (नीचे बावली में बीन का स्वर एकाएक बन्द हो जाता है और श्रीकान्त टैंट की ओर लौटता है ।) ओह ! अजीब मुसीबत है ! कुदाल और रस्सा तो टैंट मे है, और वही सांप भीखू को जकडे पडा है । अन्दर कैसे जाऊँ ?

[श्रीकान्त दुविधाग्रस्त-सा टैंट के बाहर खडा हो जाता है । तभी बावली के द्वार पर हाथ मे बीन और कन्धे पर झोला डाले हुए सँपेरा दिखाई देता है ।]

सँपेरा (आकर) श्रीमान्, आपने मुझे बुलाया था ?

श्रीकान्त (झल्लाकर) अरे, जोगी महाराज, मैं तुमसे पचास बार कह चुका हूँ कि मेरा नाम श्रीमान नही, श्रीकान्त है, जी हाँ, श्रीकान्त ।

सँपेरा : लेकिन हुजूर · ।

श्रीकान्त और मैं कहता हूँ, तुम कैसे सँपेरे हो ? सांप बावली से निकलकर यहाँ टैंट मे आ गया और तुम्हे पता तक नही चला ? जी हाँ, तुम्हे पता तक नही चला ?

सँपेरा (आश्चर्य से) क्या कह रहे हैं आप ? सांप बावली से निकलकर ?

श्रीकान्त विश्वास न हो तो टैंट के अन्दर जाकर देख लो । जी हाँ, सांप मेरे नौकर को जकडे हुए है । (एकाएक चिन्तित-सा) ऐं, भीखू की अब आवाज नही सुनाई दे रही । लगता है, सांप ने उसे ठडा कर दिया । ओह, एक आदमी [illegible] हो गह मानर । (बिगडकर) जोगी महाराज, तुम अभी तक यहाँ खडे हो ? जल्दी से टैंट मे जाओ और अपने मन्त्र-मन्तर से सांप को कील कर पिटारी मे डालो । जी हाँ, बेचारा भीखू तो . . .

सँपेरा : आपके पास टार्च है न ?
श्रीकान्त : (टार्च उठाकर जलाकर) यह रही।
सँपेरा : तो ज़रा टेंट में रोशनी फेंकिये, मैं साँप को पकड़ता हूँ।
श्रीकान्त : (टार्च की रोशनी टेंट के अन्दर डालते हुए) लो, जल्दी आगे बढ़ो।

[सँपेरा बीन बजाता हुआ टेंट के अन्दर जाता है। कुछ देर बाद बीन बन्द हो जाती है और सँपेरे की हँसी सुनाई देती है।]

सँपेरा : (हँसते हुए बाहर आकर) हुज़ूर, आपका और आपके नौकर का भी जवाब नहीं।
श्रीकान्त : (बिगड़कर) क्या मतलब ?
सँपेरा : ज़रा गौर से देखिए, आपके नौकर के पाँव मे साँप नही, रस्सा उलझा हुआ है।
श्रीकान्त : (चौंककर) क्या ? (जल्दी से टार्च की रोशनी में टेंट के अन्दर झांकता है।)
सँपेरा : (हँसते हुए) जी हाँ, मैं भी कहूँ, नीचे बावली में गैस-लैम्प जल रहा है, साँप बावली से निकलकर बिना मुझे दिखाई दिये ऊपर कैसे आ गया ? (हँसता है।)
श्रीकान्त : (अपनी शर्मिन्दगी छिपाते हुए, बिगड़कर) क्या ही-ही लगा रखी है ? देखते नही, यह भीखू तो बेहोश पड़ा है, जी हाँ।
सँपेरा : (गम्भीर होकर) यह किसी काम से टेंट मे गया होगा और···।
श्रीकान्त : मैंने इसे टेंट में लैम्प जलाने को कहा था।
सँपेरा : (टेंट के अन्दर जाते हुए) ठीक है। अँधेरे में यह रस्सा इसके पाँव मे उलझ गया होगा और रस्से को साँप समझकर यह दहशत से बेहोश हो गया होगा। थोड़ा-सा पानी दीजिए, मैं इसे होश में लाता हूँ।
श्रीकान्त : वह सामने सुराही रखी है। (अधीरता से) लेकिन इसे होश में लाने का काम मुझ पर छोड़ो। तुम भागकर नीचे बावली में जाओ और फिर से बीन बजाना शुरू करो। जी हाँ, मुहूर्त निकला जा रहा है।

[बावली के द्वार की ओर जाता हुआ सँपेरा मुहूर्त के नाम पर ठिठक जाता है।]

सँपेरा : (पलटकर) मुहूर्त ? कैसा मुहूर्त ?

श्रीकान्त : (जैसे बात बनाते हुए) अरे भई, साँप के बावली से निकलने का मुहूर्त। जी हाँ, ज्योतिषी ने कहा है कि···।

सँपेरा : (पास आकर श्रीकान्त पर भेद-भरी दृष्टि डालते हुए) अब मैं समझा।

श्रीकान्त : (सटपटाकर) क्या समझे ?

सँपेरा : (घूरकर) इस पुरानी बावली में कोई खज़ाना पड़ा है और उस पर साँप कुण्डली मारे बैठा है। आप उस साँप को हटाकर खज़ाने पर अधिकार करना चाहते हैं।

श्रीकान्त : (क्षणभर के लिए स्तब्ध-सा रह जाता है और फिर बात बनाते हुए) अरे नहीं, जोगी महाराज, आप किस वहम में पड़ गये। जी हाँ, इस बावली में खज़ाना कहाँ से आएगा।

सँपेरा : (मुस्कराकर भेद-भरे स्वर में) अजी, मैं दुनिया देखे हुए हूँ। आप मुझे नहीं बना सकते।

श्रीकान्त : अरे, इसमें बनाने की क्या बात है ? सच तो यह है कि मैंने बावली समेत यह सारा जंगल ठेके पर लिया है। जी हाँ, एक-दो दिन में यहाँ लकड़ी की कटाई का काम शुरू हो जाएगा। यह जानकर कि इस बावली में एक भयंकर नाग रहता है, मैंने सोचा कि उसे निकलवा दिया जाए, ताकि यहाँ काम करनेवाले मज़दूरों को कोई हानि न पहुँचे। लो, अब जल्दी से जाकर बीन बजाना शुरू करो। (सँपेरे को बावली की ओर धकेलते हुए) जी हाँ, बीन ऐसी बजाओ कि साँप खिंचा चला आये। ज्यों ही वह ऊपर आये, उसे पकड़कर पिटारी में बन्द कर लेना और···।

सँपेरा : (अडिग-सा) हुज़ूर, साँप तो पिटारी में बन्द हो जाएगा, लेकिन इस काम के दस रुपये बहुत कम हैं।

श्रीकान्त : (बनावटी आश्चर्य से) वाह, दस रुपये की रकम कम है ? जी हाँ, तुम दिन-भर इधर-उधर भटककर साँप का तमाशा दिखाते हो और शायद ही दस रुपये कमा पाते होगे।

सँपेरा : (दृढ़ता से) साँप के तमाशे से मैं रोजाना क्या कमाता हूँ, यह बात जाने दीजिए। अब तो यह फैसला होना चाहिए कि अगर मेरी बीन के जादू से बावली का साँप खज़ाना छोड़कर बाहर आ गया, तो आप मुझे क्या देंगे ?

श्रीकान्त : (बिगड़कर) तुम फिर वही खज़ाने की रट लगाए जा रहे हो ? कह जो दिया कि बावली में खज़ाना-वज़ाना कोई नहीं, जी हाँ।

सँपेरा : (आँखें तरेरकर) आप मुझे उड़ाइये नहीं । इसमें खज़ाना है और उसे पाने के लिए आपने लुक-छिपकर रात के इस अंधकार में यह सब प्रपंच रचा है। मैं साफ-साफ कहता हूँ, यदि मेरी बीन के जादू से साँप खज़ाना छोड़कर आ गया, तो एक चौथाई खज़ाना मेरा।

श्रीकान्त : (बिगड़कर) एक चौथाई क्यों, सारा ही ले जाना, जी हाँ।

सँपेरा : (बिना टस-से-मस हुए) नहीं हुजूर, मैं तो कायदे की बात करता हूँ। यह तो आप भी जानते हैं और मैं भी जानता हूँ कि जब तक बावली के अन्दर वह साँप खज़ाने की रक्षा कर रहा है, कोई भी आदमी खज़ाने को हाथ नहीं लगा सकता। अपनी जान जोखिम में डालकर मैं साँप को खज़ाने पर से हटाने का यह जो काम कर रहा हूँ, उसकी ठीक मजदूरी मुझे मिलनी ही चाहिए।

श्रीकान्त : ठीक है, लेकिन मजदूरी खज़ाने की एक चौथाई तो नहीं हो सकती।

सँपेरा : तो फिर मैं घर जाता हूँ। (वन-पथ की ओर बढ़ता है।)

श्रीकान्त : (घबराकर, पीछे लपकते हुए) अरे, जोगी महाराज, जा क्यों रहे हो, ज़रा सुनो तो।

सँपेरा : (पलटकर) कहिए।

श्रीकान्त : देखो, मेरे साथ मेरे ससुर के घर से दो नौकर भीखू और सरजू आये हैं। उनसे मैंने वायदा कर रखा है कि अगर खज़ाना मिल गया, तो दोनों को मैं एक-एक हज़ार रुपया दूँगा। बस, यही इनाम तुम्हारा तय हुआ, जी हाँ।

सँपेरा : एक हज़ार तो बहुत थोड़ा है।

श्रीकान्त : थोड़ा है ?

सँपेरा : खैर, आप भले आदमी जान पड़ते हैं, मैं इतना ही माने लेता हूँ।

श्रीकान्त : लेकिन एक शर्त है।

सँपेरा : क्या ?

श्रीकान्त : खज़ाने वाली बात किसी को कानोंकान मालूम न हो।

सँपेरा : इस बारे में आप निश्चिन्त रहिए।

श्रीकान्त : (सहर्ष) तो अब तुम जल्दी से नीचे बावली में जाकर बीन बजाना शुरू कर दो। जी हाँ, ऐसी बीन बजाओ कि···।

सँपेरा : (मुस्कराकर गर्व से) अजी, आप मेरी करामात देखिए। मेरी बीन में वह जादू है कि सुनकर मीलों से साँप भागे चले आते हैं।

श्रीकान्त : खैर, शादी तुम भले ही कर लेना, परन्तु मेरी तरह घर-जमाई बनकर न रहना, जी हाँ।

भीखू : राम का नाम लीजिए, सरकार। घर-जमाई बनकर रहने में कोई इज्ज़त है? देखिए न, सेठजी ने आपको कितना अपमानित करके घर से निकाला है। और तो और, मालकिन ने भी···।

श्रीकान्त : (गुस्से से तड़पकर उठते हुए) भीखू, उस कमला का मेरे सामने नाम न ले। उसी ने मुझे घर-जमाई बनने पर मजबूर किया था। जी हाँ, घर-जमाई बनते ही मैं निकम्मा और नाकारा हो गया; वर्ना क्या मैं अलग गृहस्थी बसाकर दो-ढाई सौ रुपया महीना नहीं कमा सकता था?

भीखू : वाह सरकार, लखपति की इकलौती लड़की से विवाह करके आपको भला बाहर दो-ढाई सौ की नौकरी करने की क्या पड़ी थी?

श्रीकान्त : मैंने भी यही सोचा था, लेकिन वह बूढ़ा इतना कंजूस होगा कि जेब-खर्च देना भी बन्द कर देगा, इसकी मैंने कल्पना भी नहीं की थी।

भीखू : खैर, इस भरोसे पर कि छँ-सात महीने में बूढ़े सेठजी परलोक सिधार जाएँगे, आपको सेठ घुन्नामल से मज़े से कर्ज़ मिल रहा था—जेब-खर्च के लिए। और आज भी आप इसी गारण्टी पर सेठ घुन्नामल से और भी कर्ज़ ले सकते हैं।

श्रीकान्त : (डाँटकर) भीखू, तू गधा है।

भीखू : (चौंककर) जी?

श्रीकान्त : अरे, बछिया के ताऊ, अब यह श्रीकान्त कर्ज़ लेगा नहीं, दुनिया-भर को कर्ज़ देगा। जी हाँ, अगर यह बावली वाला खज़ाना हाथ लग गया, तो बस, सूरज की पहली किरण श्रीकान्त को इस प्रदेश के सबसे बड़े धनपति के रूप में पायेगी।

भीखू : परन्तु सरकार, यह क्या तय है कि जिस साँप ने पिछले डेढ़ सौ वर्ष से खज़ाने को नहीं छोड़ा, वह आज इसे छोड़कर बाहर चला आएगा।

श्रीकान्त : क्यों नहीं आएगा? आज उसे बाहर आना ही होगा। जी हाँ, यह बीन का जादू-भरा स्वर, तारों-भरी रात, ज्योतिषी का बताया हुआ मुहूर्त्त और···।

भीखू : तो क्या शुभ मुहूर्त्त शुरू हो चुका है, सरकार?

श्रीकान्त : हाँ। (हाथ की घड़ी को देखते हुए) मुहूर्त्त शुरू होना था नौ

बजकर २६ मिनट और २० सेकण्ड पर। अब नौ बजकर ३७ मिनट हो गए हैं।

भीखू : (उमंगकर) फिर तो…।

श्रीकान्त : जी हां, सँपेरा किसी भी समय सांप के निकलने की खुशखबरी लेकर आ सकता है। तू भागकर टैंट से रस्सा और कुदाल ले आ।

भीखू : अभी लाया। (शीघ्रता से टैंट के अन्दर जाता है।)

श्रीकान्त : (एकाएक वन-पथ की ओर देखते हुए) अरे सुन, वह सरजू अभी तक शहर से क्यों नहीं लौटा?

भीखू : (टैंट से कुदाल और बड़ा-सा रस्सा लाते हुए) अब तक उसे लौट आना चाहिए था। तीन बजे यहां से गया था, साढ़े छै घंटे हो गए।

श्रीकान्त : अरे, यह तो मुझे भी मालूम है। मैं पूछता हूँ, वह अभी तक लौटा क्यों नहीं? जी हां, कोई इतना बड़ा काम तो था नहीं। यह सोचकर कि बावली के तले से खजाने की पेटी को निकालने के लिए शायद एक कुदाल और रस्सा काफी न हो, मैंने उसे एक और कुदाल और रस्सा खरीद लाने के लिए शहर भेजा था। दो चीजें खरीदने में उसे इतना समय कैसे लग गया?

भीखू : कुँवर साहब की बिकाऊ कोठी के बारे में उनके कारिन्दे से बात भी तो करनी थी।

श्रीकान्त : तो बात करने में साढ़े छै घंटे लग गए? साइकिल पर यहां से शहर का रास्ता आधा-पौन घंटे का है। (सहसा) भीखू, मुझे तो भय है कि कहीं उसकी नीयत खराब न हो गई हो।

भीखू : किसकी नीयत, सरकार?

श्रीकान्त : (चिन्तित-सा) अरे, उस सरजू की। जी हां, वह बड़ा इनाम पाने के लालच से बावली के गुप्त खजाने की सूचना पुलिस को दे सकता है।

भीखू : नहीं सरकार, सरजू इस तरह विश्वासघात नहीं कर सकता। मैं उसे बचपन से जानता हूँ। हम दोनों आठ-दस साल के थे, जब बड़े सेठजी के यहां आकर नौकर हुए थे। तीस वर्ष की नौकरी में मजाल है, उसने या मैंने कोई बेईमानी की हो।

श्रीकान्त : खैर, तुम लोगों ने बेईमानी न की हो, लेकिन वह बूढ़ा खूसट तो तुम दोनों को बेईमान ही समझता था, जी हां।

भीखू : सरकार, सेठजी तो सभी की ईमानदारी पर सन्देह करते थे। वे

समझते थे कि हर कोई उनकी तिजोरी उड़ाने की फिराक में है। और तो और, वे आप पर भी शक करते थे, इसीलिए उन्होंने आपको कभी तिजोरी वाले कमरे में नहीं आने दिया था।

श्रीकान्त (घृणा से) मुझे क्या पड़ी थी उस कमरे में जाने की? आज मुगल-काल के सेठ कुबेरचन्द का यह खजाना हाथ लग जाए फिर बताऊँगा उस बूढ़े खूसट को कि दुनिया में वही अकेला धनवान नहीं है। जी हाँ, उसके सामने कोठी लेकर ठाठ से रहूँगा और उसकी छाती पर मूँग दलूँगा। (एकाएक) लेकिन भीखू, यह सरजू अभी तक क्यों नहीं आया?

भीखू सरकार, चिन्ता न कीजिए, आता ही होगा।

श्रीकान्त मान लो कि साँप खजाना छोड़कर अभी चला जाए, तो बिना दूसरी कुदाल और रस्से के बावली में से खजाने वाली पेटी हम कैसे निकालेंगे?

भीखू सरकार, एक रस्सा और कुदाल ही काफी हैं। मैं बावली में उतरकर कुदाल से, खजाने की पेटी को कीचड़ से निकालूँगा और आप उसमें रस्सा बाँध देंगे। फिर हम दोनों उसे खींचते हुए...।

श्रीकान्त खैर, अगर इस सरजू ने मुझे धोखा दिया, तो मैं उसे गोली से उड़ा दूँगा, जी हाँ।

भीखू लेकिन सरकार, इस बन्दूक का लाइसेंस तो आपके नाम नहीं, बड़े सेठजी के नाम है।

श्रीकान्त (डपटकर) चुप रह, भीखू। लगता है, तेरी नीयत भी खराब हो रही है।

भीखू सरकार, आप यह कैसी बातें कर रहे हैं? आपकी खातिर हमने आपके ससुर बूढ़े सेठजी को छोड़ा, दर-दर की ठोकरें खाईं, इस भूतों के डेरे में आने का जोखिम उठाया। खैर, आपका भी दोष नहीं। जल्दी ही आप धनवान बनने वाले हैं और धनवानों का स्वभाव शक्की होता ही है।

श्रीकान्त (हँसकर) अरे, मैं तो यों ही बात कर रहा था। लेकिन भीखू, अगर हम आज रात खजाने को बावली से न निकाल पाये, तो वह हमारे हाथ से चला जाएगा। जी हाँ।

भीखू वह कैसे सरकार?

श्रीकान्त अरे, यह सँपेरा गाँव में जाकर सब कुछ कह देगा और दिन

चढ़ते ही बीसियों दावेदार [illegible] भूखकर घे[illegible] (चौंककर) भीखू देखना, वह सामने रोशनी [illegible]

[भीखू वन-पथ की ओर देख [illegible]
सुनाई देता है।]

भीखू : सरकार, यह तो किसी कार की रोशनी जान पड़ती है।

श्रीकान्त : (घबराकर) कार की रोशनी ? कार इधर क्या करने आ रही है ? मैंने तो सुना है कि आस-पास के लोग इस बावली में भूतों का वास मानते हैं, इसलिए रात के समय कोई भी इधर आने का साहस नहीं करता।

भीखू : (सोचते हुए) लेकिन सरकार, पुलिस तो आ सकती है।

श्रीकान्त : (डरकर) पुलिस ? लेकिन···लेकिन···?

भीखू : (घबराकर) सरकार, वह आप सरजू की नीयत बदलने की बात कह रहे थे न ?

श्रीकान्त : (सिर पकड़कर) ओह, अब समझा। सरजू ने मेरे साथ विश्वास-घात किया। (सँभलकर) खैर, कोई बात नहीं, बाद में उससे सुलट लूँगा। वह कार इधर ही आ रही है। तू भागकर नीचे बावली में जाकर सँपेरे की बीन बन्द करा दे और गैस-लैम्प बुझा दे। बावली में कोई शब्द न हो। मैं उधर टैंट के पीछे छिप जाता हूँ।

भीखू : यही ठीक है, सरकार। (जल्दी से बावली में उतर जाता है।)

श्रीकान्त : (जल्दी से बन्दूक और टार्च उठाकर टैंट के पीछे छिपता हुआ) ओह, मैंने बेकार ही इन नौकरों पर भरोसा किया।

[तभी नीचे बावली से बीन का स्वर और गैस-लैम्प का प्रकाश आना बन्द हो जाता है। आस-पास सन्नाटा छा जाता है। अलाव की लौ इतनी नहीं कि सब कुछ साफ दिखाई दे सके। कुछ देर बाद पास पहुँचती हुई कार की आवाज़ नेपथ्य में उभरती है और बायीं ओर के वन-पथ से आता हुआ कार की बत्तियों का प्रकाश स्टेज को आलोकित कर देता है। नेपथ्य में कार के रुकने और दरवाज़ा खुलने का शब्द और फिर सरजू के पीछे-पीछे कमला और वर्दी-धारी ड्राइवर का प्रवेश। सरजू ने कुदाल के साथ रस्सा उठाया हुआ है।]

कमला : (सहमी-सी इधर-उधर देखती हुई) सरजू, यहाँ तो कोई दिखाई नहीं दे रहा।

सरजू : नहीं, मालकिन, छोटे सरकार और भीखू यहीं कहीं होंगे। देखिए न यह कुदाल, रस्सा और टेंट—(एकाएक) वह देखिए, छोटे सरकार टेंट के पीछे से चले आ रहे हैं।

कमला : (ठहाका मारकर) अच्छा, यह डर के मारे छिप गए थे।

श्रीकान्त : (आकर गुस्से से) सरजू, तुमसे किसने कहा था इन्हें साथ लाने को ?

कमला : (हँसते हुए) वाह, मुझे भी यहाँ आने के लिए अनुमति लेने की ज़रूरत थी ?

श्रीकान्त : (बेरुखी से) कमला, मैं तुमसे बात नहीं कर रहा, जी हाँ।

कमला : (एकदम आगे बढ़कर) खैर, मैं तो कर रही हूँ, जी हाँ।

[तभी भीखू बावली के द्वार पर प्रकट होता है।]

भीखू : (पास आकर) आहा, मालकिन आई हैं !

श्रीकान्त : भीखू, सँपेरे से कह कि फिर से बीन बजाना शुरू कर दे। और हाँ, (जेब से माचिस निकालकर) यह माचिस ले जा। गैस-लैम्प जलाकर तू भी सँपेरे के पास ही बैठना। साँप ज्योंही निकले, मुझे तुरन्त खबर देना।

भीखू : (जाते हुए) बहुत अच्छा, सरकार।

कमला : (श्रीकान्त से) तो खज़ाना अभी मिला नहीं ?

श्रीकान्त : (बिगड़कर) सरजू, लगता है, तूने शहर में खज़ाने का ढिंढोरा पीट दिया है।

सरजू : (कुदाल और रस्सा नीचे रखकर हकलाते हुए) नहीं, सरकार। मैं एक दुकान से रस्सा और कुदाल खरीद रहा था, तभी मालकिन कार में गुज़रीं। इन्होंने मुझे देख लिया और'''।

श्रीकान्त : (दाँत पीसकर) और तूने इन्हें सब कुछ बता दिया।

कमला : अरे, आप इस बेचारे सरजू पर क्यों बिगड़ रहे हैं ? मैं सब बताती हूँ।

श्रीकान्त : कमला, मैं तुमसे बात नहीं करना चाहता।

कमला : वाह, नाराज़ मुझे होना चाहिए, उलटे आप मुझ पर नाराज़ हो रहे हैं ? आप पिताजी की बन्दूक हथियाकर दस दिन से घर से गायब हैं। कहाँ हैं, क्या-क्या कर रहे हैं, कोई खबर तक नहीं भेजी।

श्रीकान्त : (बेरुखी से) अच्छा, अब तो खबर मिल गई कि मैं कहाँ हूँ, क्या कर रहा हूँ ? अब तुम फौरन लौट जाओ।

कमला : अच्छा, तो आपको मुझसे इतनी घृणा हो गई कि···कि···?

श्रीकान्त : देखो, कमला, मेरे पास बहस के लिए समय नहीं है। ड्राइवर, इन्हें वापस घर ले जाओ, और साथ मे सरजू को भी, जो हाँ।

कमला : नहीं, ड्राइवर, मैं यही ठहरूँगी। तुम कार वापस ले जाओ।

श्रीकान्त : नहीं, कमला···।

कमला : आप मुझे जबरदस्ती तो यहाँ से भेज नहीं सकते। ड्राइवर, सुना नहीं, कार वापस ले जाओ। पिताजी को खाना खिला देना और सोते समय उन्हें वह दवा भी पिला देना, जो मैं सवेरे लाई थी।

ड्राइवर : बहुत अच्छा। (ड्राइवर जाने का उपक्रम करता है।)

श्रीकान्त : सरजू, तू भी यहाँ से दफा हो जा।

सरजू : (विमूढ़-सा) सरकार, मैं तो···मैं तो···।

श्रीकान्त : नहीं, अब मैं कुछ नहीं सुनना चाहता। तूने मेरे साथ विश्वास-घात किया है। जी हाँ, मैंने जब तुझसे कह दिया था कि···।

सरजू : (अनुनय करते हुए) सरकार, आप गलत समझ रहे हैं।

कमला : सरजू, तू जा पिताजी के पास। अगर खज़ाना मिल गया, तो वायदे के अनुसार तुझे एक हजार रुपया मिल जाएगा। ड्राइवर, सरजू को भी अपने साथ ले जाओ। तुम दोनों पिताजी का ख़्याल रखना।

ड्राइवर : बहुत अच्छा, मालकिन।

[ड्राइवर और सरजू का प्रस्थान। फिर कार के जाने का शब्द। कुछ देर बाद नीचे बावली से बीन का स्वर उभरता है और गैस-लैम्प से बावली का प्रवेश-द्वार आलोकित हो जाता है।]

श्रीकान्त : (पलटकर) कमला, तुम गई नहीं ?

कमला : कह दिया न कि मैं आपके पास यहीं रहूँगी। सरजू से मुझे सब कुछ मालूम हो गया है।

श्रीकान्त : (जैसे चुनौती देते हुए) क्या मालूम हो गया है ?

कमला : यही कि कैसे आपको कबाड़ी की दुकान से एक पुरानी पुस्तक मिली, कैसे उस पुस्तक से आपको इस खज़ाने का हाल और बावली का नक्शा मिला और कैसे आपने जंगल में भटककर

इसका पता लगाया। और बावली के खजाने की कहानी इस प्रकार है—बादशाह के कुपित हो जाने पर सेठ कुबेरचन्द अपना सारा धन लोहे की पेटी में डालकर शहर से भागा। बादशाह के सैनिकों ने उसका पीछा किया। कुबेरचन्द ने हीरे-जवाहरात से भरी हुई पेटी इस बावली में फेंक दी। है न ? यह सब तो माना जा सकता है, लेकिन एक बात मेरी समझ में नहीं आई। इस घटना को आज पूरे डेढ़-सौ वर्ष हो गए हैं। क्या इस बीच में और किसी ने उस पेटी को इस बावली से न निकाला होगा ?

श्रीकान्त कोई कैसे निकालता ? सैनिकों के हाथों सेठ कुबेरचन्द जब मरे, तो नाग बनकर इस बावली में अपने खजाने की रक्षा करने लगे, उसी तरह जैसे तुम्हारे कंजूस पिताजी आज अपनी तिजोरी की रक्षा कर रहे हैं। जी हाँ, तुम्हारे पिता का बस चले, तो वे मरते समय भी अपनी तिजोरी को छाती पर रख-कर ले जाएँ।

कमला आप तो बेकार ही पिताजी को कोस रहे हैं।

श्रीकान्त (तमककर) वाह, कोसूँ क्यों नहीं ? इतना धन जोड़ रखा है, उसे न खुद भोगते हैं, न किसी और को भोगने देते हैं। क्या मुझे भूखों मारने और अपमानित करने के लिए ही घर-जमाई बनाया था ? मैं यदि चाहता तो·· तो····।

कमला चाहने न चाहने की बात छोड़िए। मैं उनकी इकलौती लड़की हूँ। माताजी का देहान्त हो चुका था। उन्हें सहारे की आवश्यकता थी, सो उन्होंने आपको घर में रख लिया। और देखिए न, आपका भी तो कोई और सगा-सम्बन्धी नहीं।

श्रीकान्त अरे, तुम्हारे पिता ने तो जान-बूझकर मुझ अनाथ को अपना दामाद बनाया था, ताकि विवाह में दहेज न देना पड़े और घर के लिए एक मुफ्त का मुंशी मिल जाए, जी हाँ। और जब मैंने अपना कर्ज चुकाने के लिए रुपये माँगे, तो कान पकड़कर घर से बाहर निकाल दिया।

कमला यह आप क्या कह रहे हैं ? पिताजी ने कब आपको घर से निकाला ?

श्रीकान्त तो क्या मुझे कुत्ते ने काटा था कि मैं बावलों की तरह दर-दर की खाक छानता फिरा ?

कमला वे स्वभाव के जरा चिड़चिड़े हैं। बुढ़ापे में दिल की बीमारी हो

जाने से आदमी चिड़चिड़ा हो ही जाता है। आप घर में निठल्ले न बैठें, कुछ काम-धन्धा करें, इस विचार से उन्होंने आपको कुछ सख्त-सुस्त कह दिया होगा···।

श्रीकान्त : (मुँह बिचकाकर) जी हाँ, कह दिया होगा। कहा था, "नाम है श्रीकान्त अर्थात् लक्ष्मीपति और कौड़ी कमाने की योग्यता नहीं।" उसी दिन मैंने प्रण किया था कि मैं उन्हें सही मानों में लक्ष्मीपति बनकर दिखाऊँगा, जी हाँ।

कमला : (हँसते हुए) वाह, जिस दिन आपने मुझसे विवाह किया था, लक्ष्मीपति तो आप उसी दिन बन गए थे। कमला का अर्थ लक्ष्मी है न।

श्रीकान्त : कमला, बात हँसी में न उड़ाओ। मैं समझता हूँ कि तुमसे विवाह करके मैंने जीवन की सबसे बड़ी भूल की। जी हाँ, आप की तरह तुम्हें भी पैसा ही प्यारा है।

कमला : (तमककर) यह आप क्या कह रहे हैं?

श्रीकान्त : मैं ठीक ही कह रहा हूँ। उस दिन जब मैं घर से चला, तो तुमने कोई परवाह नहीं की। आज जब पता चला कि मैं भी धनवान बनने वाला हूँ, तो पीछे भागी चली आईं।

कमला : देखिये आप यह सब कहकर मेरी पति-भक्ति पर आघात कर रहे हैं। (रुआँसी होकर) आपको क्या मालूम, यह दस दिन मैंने कैसे बिताये हैं। आपको ढूंढ़ने के लिए मैंने चारों ओर आदमी भिजवाये, आपके लिए मैं पिताजी से बीसियों बार लड़ी। और मैं कहती हूँ, यदि आप आवेश में घर से न चल देते, तो मैं कर्ज चुकाने के लिए पिताजी से आपको एक हज़ार दिला देती।

श्रीकान्त : (घृणा से) अरे, वह बूढ़ा कंजूस किसी को क्या देगा? किसी को आज तक उसने आशीर्वाद तक तो दिया नहीं।

कमला : खैर, यह तो मैं मानती हूँ कि पिताजी थोड़े-से कंजूस हैं, लेकिन···।

श्रीकान्त : थोड़े-से कंजूस? अरे, तुम्हारे पिता की तो वह हालत है कि चमड़ी जाय, पर दमड़ी न जाय। दिल के घातक रोग के लिए भी दवाई धर्मार्थ औषधालय से मँगाई जा रही है।

कमला : नहीं, आज मैंने २१ रुपये फीस देकर शहर के सबसे बड़े डॉक्टर को बुलाया था और इंजेक्शनों-दवाइयों पर पूरे ७० रुपये खर्च किये थे।

श्रीकान्त : (आश्चर्य से) एकाएक इतना खर्च कर दिया? खर्च की यह

रकम अपने पिता को तो नही बता दी? जो आदमी खर्च के डर से दो साल से छकड़ा बनी कार की मरम्मत नही करा सकता, वह अपनी मरम्मत पर इतना खर्च कैसे बर्दाश्त कर सकता है? घर के फर्नीचर तक को वे कभी इस डर से झाड़ने-बुहारने नही देते कि वह कही घिस न जाए। बर्तनो मे नही खाते कि कही उनका पालिश न उतर जाए। घर मे कोई आधी रोटी अधिक खा ले, तो उनके दिल मे होल उठने लगता है। ज़रा इन भीखू और सरजू की ही हालत देखो। पिछले तीस वर्षों से ये दोनो जी-जान से उनकी सेवा कर रहे हैं। पूरी तनख्वाह मिलना तो दूर, इन्हे कभी भर-पेट खाना तक नही मिला। कमला, सच कहूँ, सूदखोरी करते-करते तुम्हारे पिता आदमखोर बन गए हैं, आदमखोर।

कमला : (मुँह फुलाकर) आप तो, बस…!

श्रीकान्त : जी हाँ, तुम्हे अपने बाप के विरुद्ध ये बातें क्यो अच्छी लगेंगी? लेकिन मैं कहता हूँ, उनकी अवस्था साठ वर्ष की हो गई है। उनका अब भगवान का भजन करने का समय है। लेकिन वे तो पैसे को ही अपना भगवान समझते हैं, और…और भगवान जैसे इस दामाद को समझते हैं रास्ते का पत्थर।

कमला : खैर, पुरानी बातें छोडिए। आप मेरे साथ घर चलिए, मैं उन्हे सब समझा दूँगी।

श्रीकान्त : अब मैं उस घर मे कदम नही रखूँगा! कुँवर साहब की कोठी खरीदकर मैं उनके सामने करोडपति बनकर रहूँगा और उन्हे बताऊँगा कि कैसे रातोरात करोडपति बनकर धन का उपभोग किया जाता है, जी हाँ।

कमला : तो क्या आपने सचमुच ही कुँवर साहब की कोठी खरीदने का फैसला कर लिया है?

श्रीकान्त : सिर्फ कोठी ही नही, कल ही दो कारें खरीदूँगा, जी हाँ। और अगले महीने यूरोप की यात्रा पर चला जाऊँगा। वहाँ से लौटकर यहाँ दो कारखाने खोलूँगा—एक खेलो के सामान का और दूसरा चॉकलेट की मिठाइयो का।

कमला : सच? आज मैं कितनी प्रसन्न हूँ। माँ-बाप का घर चाहे कैसा भी हो लड़की की शोभा अपने पति के घर मे ही होती है। और सच कहूँ, खज़ाना मिलते ही मैं…(एकाएक बीन बन्द हो जाती है। चौंककर) सँपेरे ने बीन बजाना क्यो बन्द कर दिया?

श्रीकान्त : (हर्ष से उछलकर) इसका मतलब है कि खजाने के साँप को पकड़कर पिटारी में बन्द कर लिया गया है। जी हाँ, अब मैं बावली में जाकर खजाने पर कब्जा कर सकता हूँ। कमला, मैं करोड़पति बन गया हूँ, मेरी योजना सफल हुई। (बावली के प्रवेश-द्वार के पास जाकर) भीखू, भीखू, जल्दी से कुदाल और रस्सा नीचे बावली में ले चल।

कमला : कुदाल और रस्से से क्या होगा?

श्रीकान्त : मैं बावली की तह में जाकर रस्सा खजाने की पेटी में बाँधूँगा, भीखू उसे कुदाल से कीचड़ में से निकालेगा और फिर उसे हम खींचकर ऊपर ले आयेंगे।

कमला : लेकिन यह तो बड़ा जोखिम का काम है।

श्रीकान्त : अरे, बिना जोखिम उठाये माया हाथ नहीं आती। जी हाँ, लक्ष्मी हम जैसे वीर और साहसी पुरुषों का ही वरण करती है।

कमला : लेकिन···

श्रीकान्त : (हर्ष विभोर-सा) लेकिन-वेकिन छोड़ो, कमला। करोड़पति बनने का नुस्खा मेहनत-मजदूरी नहीं, इस तरह का दुःसाहस ही है। जी हाँ, और लोग तो ब्याज-बट्टे और चोरबाजारी से करोड़पति बनते हैं, पर मैं आज···।

[तभी भीखू भागा हुआ ऊपर आता है। उसके पीछे-पीछे झोला और बीन उठाये हुए सँपेरा भी।)

भीखू : (आकर) सरकार, सँपेरा जा रहा है।

श्रीकान्त : हाँ, अब यह जा सकता है। अपने इनाम के एक हजार रुपये वह बाद में आकर मुझसे ले लेगा।

सँपेरा : श्रीमान् मुझे एक हजार रुपये नहीं, मजदूरी के दस रुपये चाहिए।

श्रीकान्त : नहीं, नहीं, मैं अपने वायदे के अनुसार एक हजार रुपये ही दूँगा। भीखू, वे दोनों रस्से और कुदालें नीचे बावली में ले जा। मैं कपड़े उतारकर आता हूँ।

भीखू : लेकिन सरकार, बावली से साँप तो अभी निकला ही नहीं।

श्रीकान्त : (चौंककर, हैरान-सा) क्या?

भीखू : यह सँपेरा कहता है कि इस बावली में न कोई खजाना है, न कोई साँप है।

श्रीकान्त : (सटपटाकर) नहीं, यह झूठ बोलता है। लगता है, इसकी नीयत भी…।

सँपेरा : मेरी नीयत ठीक है। बीन बजाने के लिए आप किसी और सँपेरे को बुला लीजिए। मेरी मजदूरी के दस रुपये दीजिए।

श्रीकान्त : (क्रुद्ध होकर) वाह, साँप निकला नहीं, तो दस रुपये कैसे दे दूँ? जाओ, नीचे बावली में जाकर फिर से बीन बजाना शुरू करो।

सँपेरा : (दृढ़ता से) बावली में जब साँप ही नहीं है, तो बीन बजाने से क्या होगा?

श्रीकान्त : यह क्यों नहीं कहते कि तुम्हारी बीन में साँप निकालने की शक्ति ही नहीं है।

सँपेरा : खैर, शक्ति है या नहीं, आप मेरी मजदूरी के दस रुपये दीजिए।

श्रीकान्त : मैं तुम्हें एक कौड़ी नहीं दूँगा।

सँपेरा : वाह, इतनी देर तक बीन बजवाकर आप मेरी मजदूरी मार लेंगे?

कमला : जोगी महाराज, आप व्यर्थ झगड़ा क्यों करते हैं? बावली से साँप निकाल दीजिए और अपनी मजदूरी के दस रुपये ही नहीं, इनाम भी लीजिए।

सँपेरा : बीबीजी, इस बावली में साँप है ही नहीं, तो निकालूँ किसे?

श्रीकान्त : (मुँह बिचकाकर) साँप है ही नहीं! जी हाँ, तुम दिव्य दृष्टि वाले महात्मा हो, जो पता लगा लिया है कि बावली में साँप नहीं है!

सँपेरा : महात्मा न सही, थोड़ी-बहुत अक्ल वाला इन्सान तो हूँ ही। बाबूजी, आप भी अक्ल से काम लीजिये और खज़ाने की खोज में बेकार अपना समय नष्ट न कीजिए।

श्रीकान्त : (आवेशपूर्ण स्वर में) बेकार बातें न बनाओ। जाओ, नीचे जाकर बीन बजाओ। (हाथ की घड़ी देखकर) मुहूर्त के बीस मिनट अभी बाकी हैं।

कमला : (प्रोत्साहित करते हुए) हाँ, हाँ, जोगी महाराज, बीस मिनट और बीन बजा दीजिए।

सँपेरा : बीबीजी, आप मेरी बात मानिए। बावली में साँप होता तो अब तक मेरी बीन के जादू से कब का बाहर निकल आया होता। और…और इस बीच भीखू से मुझे खजाने का इतिहास मालूम

हो गया है। मैं इसी इलाके का निवासी हूँ। मैं जानता हूँ कि पिछले डेढ़ सौ वर्षों में बावली का पानी कई बार सूखा है। ज़रा आप ही सोचिए, क्या वह खज़ाने वाली पेटी लोगों की नज़रों से अब तक बची रही होगी ?

कमला : (सोचते हुए) जोगी महाराज, सन्देह तो मेरे भी मन में है, परन्तु इन्होंने जब विश्वासपूर्वक कहा कि खज़ाना अभी तक बावली में है, तो मुझे भी मानना पड़ा।

श्रीकान्त : (झल्लाकर) कमला, तुम भी इस सँपेरे की हाँ में हाँ मिलाने लगी ? मैं कोई इतना बुद्धू नहीं कि···।

कमला : (हँसते हुए) खैर, पिताजी की तो यही राय है कि···।

श्रीकान्त : (आग-बबूला होकर) कमला, इस तरह मेरा अपमान करते हुए तुम्हें शर्म आनी चाहिए। जी हाँ, उस बूढ़े खूसट को मैं दिखा दूंगा कि···कि···।

[भीखू रोने लगता है।]

कमला : अरे भीखू, तू क्यों रो रहा है ?

भीखू : (रोते हुए) मालकिन, क्या बताऊँ, मैं तबाह हो गया, बर्बाद हो गया।

श्रीकान्त : अरे, बछिया के ताऊ, इस सँपेरे के गोलमाल से तबाह तो मैं हो गया हूँ, तेरा क्या गया ?

भीखू : (सिसकते हुए) सरकार खज़ाना नहीं मिला, तो आपसे मुझे एक हज़ार रुपये नहीं मिलेंगे।

श्रीकान्त : कैसे मिल सकते हैं ?

भीखू : (सिसकते हुए) और बिना एक हज़ार के मेरा ब्याह नहीं हो सकता। हाय, मैंने तो ब्याह के लिए अपने घरवालों को चिट्ठी भी लिख दी थी। उन्होंने लड़कीवालों से बात भी पक्की कर ली होगी और···।

कमला : (हँसते हुए) भीखू, तूने तो शेखचिल्ली को भी मात कर दिया।

भीखू : मालकिन, मैंने तो छोटे सरकार की बातों पर भरोसा करके ही चिट्ठी लिखी थी।

श्रीकान्त : मुझे तो अब भी विश्वास है कि इस बावली में खज़ाना है, और मैं निकालकर दिखाऊँगा, जी हाँ।

कमला : इस विश्वास का कोई ठोस आधार भी तो होना चाहिए।

श्रीकान्त : आधार है वह पुस्तक, जो···।

कमला : क्या मैं वह पुस्तक देख सकती हूँ ?

श्रीकान्त : (जेब से बिना जिल्द की एक फटी-पुरानी पुस्तक निकालकर) यह रही वह पुस्तक, जी हाँ ! इसके पृष्ठ ३२२ पर···।

कमला : (पुस्तक लेकर) जरा ठहरिए। (इधर-उधर पन्ने पलटकर पढ़ती है।)

सँपेरा : श्रीमान् जी ! मुझे क्यों रोक रखा है ? मेरी मजदूरी के दस रुपये दीजिए, मैं जाऊँ।

श्रीकान्त : मजदूरी तुम्हें तभी मिलेगी, जब बावली से साँप निकालकर दिखाओगे। जी हाँ, इस तरह एक कौड़ी नहीं दूँगा।

सँपेरा : (गुस्से से) मैं तो पूरे दस रुपये लेकर ही जाऊँगा।

[कमला पुस्तक पढ़कर, एकाएक ठहाका मारकर हँसती है।]

श्रीकान्त : (चौंककर) कमला, हँस क्यों रही हो ?

कमला : मैं हँस रही हूँ आपकी बुद्धि पर।

श्रीकान्त : (बिगड़कर) क्या मतलब ?

कमला : (हँसते हुए) मतलब यह कि जिस पुस्तक को आप प्रामाणिक इतिहास-ग्रन्थ समझकर खज़ाने की खोज कर रहे थे, वह तो वास्तव में···।

श्रीकान्त : (घबराकर) क्या ?

कमला : पुराने ढंग का एक उपन्यास है।

श्रीकान्त : (जैसे अचेत होते हुए) उपन्यास ?

कमला : (हँसते हुए) जी हाँ। जरा ध्यान से इस अध्याय पर नज़र डालिए। (श्रीकान्त पुस्तक लेकर पढ़ता है।) पिताजी आपके बारे में ठीक ही कहते हैं कि आप···।

सँपेरा : (मुस्कराते हुए) मैंने भी ठीक ही कहा था। बीबीजी, अब मेरी मजदूरी के दस रुपये तो दिला दीजिए।

श्रीकान्त : (पत्थर पर धड़ाम-से बैठकर) अरे, तुम्हें दस रुपयों की पड़ी है, मेरा यहाँ लाखों का नुकसान हो गया।

भीखू : (श्रीकान्त के पाँवों में बैठकर सिसकते हुए) हाय, मेरा ब्याह···!

कमला : इस रोने-पछताने से कुछ नहीं होगा। दोनों उठो और घर चलो।

श्रीकान्त : (सिसकता हुआ, हताश-सा) नहीं कमला, इस हार के बाद मेरे

लिए यही उचित है कि मैं इसी समय इस बावली में डूब मरूँ, जी हाँ !

[जल्दी से बावली की ओर जाता है। कमला घबराकर उसे रोकती है।]

कमला : (रुंधे कण्ठ से) क्या आप मेरे जीते जी आत्म-हत्या करेंगे?
श्रीकान्त : तुम जाओ, मैं अब जिन्दा नहीं रह सकता।

[बावली की ओर लपकता है, परन्तु सँपेरा उसका बाजू पकड़ लेता है।]

सँपेरा : श्रीमान्, मरने से पहले मेरे दस रुपये तो देते जाइए।
श्रीकान्त : (गुस्से से) तुम्हें तो मैं एक कौड़ी नहीं दूँगा, जी हाँ।

[नेपथ्य में कार के आने का शब्द।]

कमला : (चौंककर) अरे, इधर कोई कार चली आ रही है।
श्रीकान्त : (चौंककर) ऐं, कार ! यह कार किसकी हो सकती है?

[सब आश्चर्य और उत्सुकता से वन-पथ की ओर देखते हैं। कुछ देर बाद कार के रुकने का शब्द सुनाई देता है। कार की बत्तियों से स्टेज एकदम आलोकित हो उठता है।]

कमला : अरे, यह तो हमारी ही कार है (ड्राइवर का प्रवेश) ड्राइवर, लौट क्यों आए?
ड्राइवर : (रुंधे गले से) मालकिन, क्या बताऊँ, अभी हमने जाकर बड़े सेठजी को जब यह बताया कि आप घर नहीं लौट रही हैं, तो उन्हें दिल की बीमारी का दौरा पड़ा और'''।
कमला : और?
ड्राइवर : और उनका देहान्त हो गया।
श्रीकान्त : (सहसा) देहान्त हो गया?
कमला : (रोकर) हाय, पिताजी ! हाय, मेरे वियोग में ही पिताजी ने प्राण त्याग दिए ! ड्राइवर, मुझे जल्दी घर ले चलो।

[कमला हाथों में मुँह छिपाकर रोती है, लेकिन श्रीकान्त के चेहरे पर नई चमक आ गई है।]

श्रीकान्त : कमला, व्यर्थ ही अपने को दोषी न ठहराओ। उनका देहान्त तुम्हारे वियोग के कारण नहीं, आज इलाज पर हुए खर्च के कारण हुआ होगा। (कमला रोये जा रही है।) कमला, रोने से क्या होगा? आई को कौन टाल सकता है? बूढ़े थे, बीमार थे, आखिर एक दिन तो उन्हें मरना ही था। धीरज से काम लो। मैं भी तुम्हारे साथ चलता हूँ। (जेब से नोट निकालकर) जोगी महाराज, यह लो अपनी मजदूरी के दस रुपये। (मुस्कराकर) तुम्हारा परिश्रम बेकार नहीं गया।

सँपेरा : क्या मतलब, हुजूर?

श्रीकान्त : साँप खजाने को छोड़कर चला गया।

सँपेरा : (चकित-सा) साँप खजाने को छोड़कर चला गया?

श्रीकान्त : जी हाँ।

[श्रीकान्त हर्ष-विभोर-सा बीन बजाकर साँप को भगाने का अभिनय करता है। सब आश्चर्यचकित-से उसकी ओर देखते हैं।]

[पर्दा गिरता है।]

आत्मा के पाँव



निश्तर ख़ानक़ाही

पात्र-परिचय

महाराज सिंह	: एक बूढ़ा जागीरदार
पी० सी० सक्सेना	: मकान का नया किरायेदार
पुष्पा	: सक्सेना की पत्नी
सुधीर	: सक्सेना का पुत्र (उम्र १९ वर्ष)
सुमन	: सक्सेना की बेटी (उम्र १७ वर्ष)
हिम्मतराय	: महाराज सिंह का नौकर
कलावती	: हिम्मतराय की पत्नी

समय : वर्तमान।
स्थान : एक पुराना भव्य महल।

[एक पुराने विशाल महल का दृश्य : महल के एक भाग के द्वार पर नाम की तख़्ती लगी है, जिस पर लिखा है—पी० सी० सक्सेना। महल की दीवारें पुरानी होकर अपनी शोभा खो बैठी हैं। जगह-जगह से प्लास्तर उखड़ गया है, काले धब्बे पड़ गए हैं। द्वार इतना ऊँचा है जिसमें कभी हाथी आसानी से गुज़र जाया करता होगा। प्रभात के धीमे उजाले में पी० सी० सक्सेना के द्वार की घण्टी बजती है। द्वार खुलता है तो सामने महल के स्वामी महाराज सिंह खड़े दिखायी देते हैं। ७५ वर्ष के

लगभग अवस्था होगी। चेहरे पर राजपूतो-जैसी दाढी। लम्बा कद, चेहरे पर पुराने सामतो जैसा रुआब। सफेद अँगरखा पहने हुए।]

महाराज सिंह . हेलो। मिस्टर सक्सेना। कहो रात कैसी गुजरी?

सक्सेना : ठीक ही गुजरी राजा साहब! आराम से रहे। आइये अन्दर तशरीफ ले आइये। एक कप चाय हो जाए हम लोगो के साथ।

[महाराज सिंह और सक्सेना दोनो द्वार के साथ लगे मेहमानखाने मे प्रवेश करते हैं। मेहमानखाना सादगी किन्तु सलीके से सजाया गया है। सामने दीवार पर मोनालिसा का सुन्दर चित्र टँगा है। दोनो सोफे पर बैठ गए हैं।]

महाराज सिंह अफवाहे जब देर तक और निरतर चलती रहती हैं, तो एक वक्त ऐसा भी आता है कि वह सच मान ली जाती हैं। इस भवन के साथ भी ऐसा ही हुआ है।

सक्सेना यह तो ठीक है, लेकिन कुछ लोग ऐसे भी हैं, जो अफवाहो पर आँखें मूंदकर विश्वास नही करना चाहते। अफवाहे दरअसल अधविश्वास को जन्म देती हैं और अधविश्वास आदमी के भीतर छुपी अज्ञानता को छूकर कितने ही भयकर रूप धारण कर लेता है।

महाराज सिंह : आप ठीक कहते हैं मिस्टर सक्सेना। लेकिन कभी-कभी ऐसा भी लगता है कि आदमी के पास जो ज्ञान है, जो जानकारी है, उसके आगे भी कुछ चीजें हैं, जो समझ मे नही आती, लेकिन होती हैं। इतने वर्षों के बाद मुझे खुद यह विश्वास हो गया था कि महल के इस भाग के बारे मे जो कुछ कहा जाता है, शायद वह सही है।

सक्सेना नही राजा साहब, एक झूठ को सौ बार दोहराया जाए तो वह सच हो जाता है। कम-से-कम मैं तो इन ढकोसलो को मानता नही। अगर मानता होता तो इतनी बातें सुनने के बाद आपकी शरण मे क्यो आता?

महाराज सिंह . लेकिन मैंने तो शुरू ही मे महल के इस भाग के बारे मे सब कुछ आपको बता दिया था। आप खुद नही माने।

सक्सेना . मजबूरी थी राजा साहब! एक तो कोई मुनासिब जगह मिल

नहीं रही थी, दूसरे मैं विश्वास भी नहीं करता था ऐसी बेसिर पैर की बातों पर।

महाराज सिंह : अभी तो पहली ही रात गुज़री है। आगे देखिए क्या होता है। भगवान न करे आपके साथ भी कुछ ऐसी घटना गुज़रे जैसी आपसे पहले किरायेदारों के साथ गुज़र चुकी है।

सक्सेना : देखते हैं, आप बिलकुल निश्चिंत रहें राजा साहब।

[दोनों के बीच कुछ पल खामोशी रहती है। इतने ही में श्रीमती पुष्पा सक्सेना चाय की ट्रे लिये हुए ड्राइंग रूम में प्रवेश करती हैं। ट्रे मेज पर रखते हुए श्रीमती पुष्पा हाथ जोड़कर महाराज सिंह को नमस्कार करती हैं और मिस्टर सक्सेना के निकट बिछी कुर्सी पर बैठ जाती हैं।]

महाराज सिंह : कहिए पुष्पाजी। कुछ विशेष तो नहीं घटा रात में, मुझे तो रात-भर आप सब लोगों की चिंता लगी रही।

[पुष्पा संकोच-भरी दृष्टि से पति की ओर देखती है।]

पुष्पा : (महाराज सिंह को संबोधित करते हुए) सक्सेना साहब तो किसी बात को मानते नहीं लेकिन सच कहती हूँ, मुझे तो रात-भर नींद नहीं आई।

सक्सेना : पुष्पा, तुम तो खाहमखाह के भ्रम पाल लेती हो। जो कुछ भी रात तुमने महसूस किया, उसकी असलियत कुछ और भी हो सकती है।

पुष्पा : लेकिन जो कुछ मैंने महसूस किया, उसे झुठला तो तुम भी नहीं सके। सुधीर और सुमन ने भी इस घटना की गवाही दी। सबके सब आदमी तो झूठ नहीं बोलेंगे।

सक्सेना : कभी-कभी ऐसा भी होता है, सबकी एक ही जैसी साइकोलोजी बन जाती है। रात है, सन्नाटा है, ऐसे में किसी आवाज का धोखा मुझे होता है, और मैं उसे दूसरे लोगों से कहता हूँ तो यह संभव है, कि सबके कान बजने लगें। सभी वह आवाज सुनने लगें।

पुष्पा : आप तो अपनी हठ पर अड़े रहते हैं, किसी और की मानते कब हैं?

महाराज सिंह : लेकिन बताओ तो सही पुष्पाजी, रात आपने क्या महसूस किया?

पुष्पा : राजा साहब ! रात दो बजे के लगभग जब मेरी आँख खुली तो मुझे लगा कि जैसे छत पर किसी के चलने की आवाज़ आ रही है !

महाराज सिंह : तब ! फिर तुमने क्या किया ?

पुष्पा : पहले तो मैंने उस आवाज़ को ध्यान से सुना। सोचा शायद मेरा भ्रम हो, किन्तु आवाज़ लगातार आती रही। जब मुझे विश्वास हो गया तो मैंने सक्सेना साहब को जगाया।

सक्सेना : राजा साहब ! यह तो ठीक है कि छत पर किसी के चलने की आवाज़ आ रही थी। लेकिन बिल्ली या बन्दर भी हो सकता है।

पुष्पा : सक्सेना साहब ! बिल्ली, बन्दर और आदमी के कदमों की आवाज़ में बहुत अन्तर होता है।

महाराज सिंह : अच्छा आगे सुनाओ, फिर क्या हुआ ?

पुष्पा : हम दोनों, देर तक उस आवाज़ पर कान लगाए रहे, सक्सेना ने एक बार छत पर जाने का इरादा भी किया, लेकिन मैंने रोक दिया। मैं अन्दर-अन्दर खौफ के मारे सहम रही थी, मैंने सुधीर और सुमन को भी जगा दिया। सब लोग सावधान होकर बैठ गए।

[महाराज सिंह पीड़ा-भरी आँखों से पुष्पा को देखता है।]

महाराज सिंह : (सक्सेना को सम्बोधित करते हुए) मकान किराये पर देने से पूर्व ही मैंने सारी स्थिति आपको बता दी थी। लेकिन आप स्वयं नहीं माने। मैंने तो आपसे कहा था कि यहाँ कोई भी किरायेदार नहीं टिक सका है, और अब तो बहुत अर्से से कोई आता ही नहीं था।

सक्सेना : छोड़िए राजा साहब। मैं इतनी आसानी से डरने वाला नहीं हूँ।

पुष्पा लेकिन राजा साहब ! पूरी बात तो सुनिए। अभी तो एक आइटम और है।

महाराज सिंह : तो क्या इसके बाद भी कुछ हुआ ?

पुष्पा : कुछ देर बाद कदमों की आवाज़ तो रुक गई लेकिन छत पर एक ऐसा स्वर गूँजने लगा, जैसे कोई सितार बजा रहा हो। क्यों सक्सेना साहब ? क्या आपने और सुधीर, सुमन ने नहीं सुना।

सक्सेना : (हामी भरते हुए) सुना तो बेशक ! लेकिन जैसा कि मैंने अभी कहा कि यह कलेक्टिव साइकोलोजी भी हो सकती है ।

पुष्पा : सचाई को झुठलाना हो तो उसके लिए बहुत से तर्क लाए जा सकते हैं । लेकिन सच यह है कि काफी देर तक छत से सितार बजने की आवाज आती रही और हम सारी रात नहीं सो सके ।

[सुमन और सुधीर ड्राइंगरूम में दाखिल होते हैं, सब लोग चाय पीने में व्यस्त हैं]

सुधीर : लेकिन मम्मी, इतनी जल्दी हम क्यों मान लें कि मकान में जरूर ही कोई गड़बड़ है । कुछ दिन देख लें । पता लगाएंगे, सच्चाई क्या है ।

पुष्पा : तुम भी अपने पापा से कम नहीं हो, कानों-सुनी और आँखों-देखी को तुम झुठला सकते हो भई, हमसे तो यह होगा नहीं ।

सुमन : कदमों की चाप और सितार की धुन तो बेशक छत से आ रही थी, लेकिन सचाई क्या है, फिलहाल यकीन से कुछ भी नहीं कहा जा सकता । हो सकता है, सुनी-सुनाई बातें हमारे कानों में आवाजें बनकर गूँजने लगी हों ।

पुष्पा : अरे ! तुम सब अपने बाप की तरह अधर्मी हो । मैं तो भई इस मकान में रहने वाली नहीं ।

[दृश्य-परिवर्तन, फ्लैश बैक में]

हिम्मत राय : (महल की बाहरी ड्योढ़ी पर सक्सेना से बात करते हुए) साहब, मैं तो आपको यही राय दूंगा कि यह मकान आप किराये पर न लें ।

सक्सेना : क्यों ?

हिम्मत राय : आप परदेसी हैं और हाव-भाव से भले आदमी दिखाई पड़ते हैं, फिर बीवी-बच्चों वाले हैं, यहाँ तो आज तक कोई टिक ही नहीं सका । सबको पता चल गया कि इस भवन में एक दुखी आत्मा का साया है ।

सक्सेना : दुखी आत्मा का साया ? क्या मतलब ?

हिम्मत राय : कुछ देर बैठें तो पूरी बात बताऊँ ।

[दोनों हिम्मत राय के कमरे में कुर्सियों पर बैठ जाते हैं ।]

सक्सेना : मेरा नाम पी० सी० सक्सेना है। मैं समाज कल्याण अधिकारी के पद पर बदायूँ से ट्रांसफर होकर यहाँ आया हूँ।

हिम्मत राय : अच्छा हो कि शहर में कोई दूसरा मकान ढूँढ लें। यहाँ का ख्याल छोड़ें। यह जगह ठीक नहीं है।

सक्सेना : लेकिन ? यहाँ ऐसी क्या खराबी है ?

हिम्मत राय : साहब ! अब मैं पचपन साल का हो चुका हूँ। अट्ठारह वर्ष की उम्र से इस महल की सेवा कर रहा हूँ। मैंने वह दिन देखे हैं, जब इस महल में चहल-पहल थी, नौबत बजती थी, हाथी झूमते थे, बड़े राजा-साहब, शमशेर जंग बहादुर जिन्दा थे और दरबार लगता था।

सक्सेना : यह उन दिनों की बात होगी जब रियासत जब्त नहीं हुई थी।

हिम्मत राय : हाँ साहब ! अब क्या है, अब तो सारी बहार लुट चुकी है। बड़े राजा साहब के ज़माने में मैं यहाँ मुनीम के पद पर नौकर हुआ था। इस बात को सैंतीस साल हो गए।

सक्सेना : इमारत खुद ही बताती है कि कभी यह बहुत शानदार जगह रही होगी।

हिम्मत राय : आप कल्पना नहीं कर सकते साहब। उन दिनों क्या दबदबा, क्या शान-शौकत थी। बड़े राजा साहब के चूल्हे की आग दिन-रात में कभी ठण्डी नहीं होती थी।

सक्सेना : अब तो हवेली में खाक उड़ती है, जैसे मरघट का दृश्य हो।

हिम्मत राय : महल के दक्षिणी हिस्से में तीन किरायेदार हैं। दरमियान का बड़ा हाल भी जिसमें बड़े राजा साहब दरबार लिया करते थे, सरकारी गोदाम के लिए किराये पर उठा दिया गया है।

सक्सेना : तो अब महाराज सिंह जी की कुल मिलाकर यही आमदनी रह गई है ?

हिम्मत राय : हाँ जी ! बड़ी मुश्किल से गुजारा होता है। महल का यह भाग, जिसे आप किराये पर लेना चाहते हैं, कोई लेता नहीं। सब जान गए हैं, यहाँ एक दुखी आत्मा का साया है।

सक्सेना : हिम्मत राय ! मैं इन बातों को बिलकुल नहीं मानता। ऐसा कुछ नहीं है, यह सब भ्रांतियाँ हैं। बेकार की बात हैं।

हिम्मत राय : आप न मानें, लेकिन जो सचाई है, मैं तो [illegible]। कई लोग इसी कारण [illegible] गए।

सक्सेना : लेकिन मैं [illegible] हिम्मत [illegible] पर विश्वास हो [illegible]

हिम्मत राय : आप विश्वास करें न करें, लेकिन मैं राय नहीं दूँगा कि आप यह मकान लें। बड़े राजा साहब मुझे महल का यह भाग उपहार मे देना चाहते थे, किन्तु समय से पूर्व ही उनका देहान्त हो गया और फिर ऐसे हालात पैदा हुए कि बस···।

सक्सेना : (बीच में टोकते हुए) तो क्या महल के इस भाग में उन दिनों तुम रहा करते थे हिम्मत राय?

हिम्मत राय : नहीं! बड़े राजा साहब, महाराज शमशेर जंग बहादुर ने यह भाग अपनी छोटी बेटी राजकुमारी कल्याणवती को दे दिया था, उनका विचार था कि राजकुमारी के विवाह के उपरांत यह हिस्सा अपने सेवक को दे देंगे, किन्तु ऐसी नौबत नहीं आ सकी।

सक्सेना : शायद शमशेर जंग की मौत के बाद महाराज सिंह की राय बदल गई होगी।

हिम्मत राय : रियासत की ज़ब्ती ने सारा सिलसिला ही बदल दिया। महल के सभी फालतू हिस्सों को किराये पर उठाने की नौबत आ गई। फिर एक ऐसा हादसा हुआ जिसने इस भवन का भाग्य ही बदल दिया।

सक्सेना : वह क्या?

हिम्मत राय : रियासत की ज़ब्ती और महाराज शमशेर जंग बहादुर की मौत के बाद राजकुमारी भवन में आए पहले किरायेदार दरोगा शेर मौहम्मद खाँ से प्रेम करने लगी थी।

सक्सेना : (आश्चर्य से) दरोगा शेर मौहम्मद खाँ से? एक मुस्लिम युवक से?

हिम्मत राय : जी हाँ! प्रीत न जाने जात कुजात! होते-होते महाराज सिंह को भी इस भेद का पता लग गया। उन्होंने राजकुमारी को बहुत समझाया लेकिन वह नहीं मानी।

सक्सेना : फिर?

हिम्मत राय : फिर क्या था। राजकुमारी ने अपना फैसला सुना दिया कि वह दरोगा शेर मौहम्मद खाँ से प्रेम-विवाह कर रही है। विवश होकर महाराज सिंह ने शेर मौहम्मद खाँ से मकान छोड़ने के लिए कहा। शेर मौहम्मद खाँ चला गया लेकिन राजकुमारी कई दिन तक भवन के सारे द्वार बन्द किए अपने प्रेमी के वियोग मे तड़पती रही। वह घर से बाहर नहीं निकली। खान-पान त्याग दिया। पाँचवें दिन जब भवन के द्वार तोड़कर देखा गया तो राजकुमारी की स्थिति नाजुक हो चुकी थी। लाख समझाने पर भी वह भवन से बाहर नहीं आई। न कुछ खाया·

पिया। सातवें दिन उसने अपने प्रेमी के वियोग में तड़प-तड़प-कर आत्महत्या कर ली। तभी से इस भवन में उसकी आत्मा भटक रही है।

सक्सेना दुखद घटना है। लेकिन उसकी आत्मा अब भी इस भवन में भटक रही होगी। मैं नही मानता ?

हिम्मत राय · न मानें साहब। आपसे पहले जो भी किरायेदार यहाँ आया, उसने आधी रात को छत पर किसी के टहलने और सितार पर बजते हुए दर्दीले गीत जरूर सुने। कोई भी दो-चार दिन से अधिक यहाँ नही रहा।

सक्सेना हम भी देखते हैं, एक तजुर्बा करके। कम-से-कम राजकुमारी की आत्मा से मुलाकात तो करेंगे ही।

हिम्मत राय : आप जानें साहब। हमने तो जो सच्चाई थी, बता दी।

[दृश्य-परिवर्तन, फ्लैश बैक]

[रात का समय है। पी. सी. सक्सेना, उसकी पत्नी पुष्पा कमरे में सोये हुए हैं, दूसरे कमरे में सुधीर और सुमन हैं। पूरा भवन खामोशी की चादर में लिपटा हुआ है। घड़ी की टिक-टिक के अतिरिक्त और कोई आवाज नही।]

पुष्पा : (चौंककर उठते हुए) अरे ! छत पर यह कैसी आवाज़ है। ऐसा लगता है जैसे कोई ऊपर टहल रहा हो। (कुछ देर तक आवाज पर ध्यान लगाए रखती है फिर घबराकर पति को जगाती है।)

सक्सेना (अगड़ाई लेते हुए) अरे भई क्यो परेशान करती हो। क्या हो गया ?

पुष्पा · सुनो, ऊपर से यह कैसी आवाज आ रही है।

सक्सेना : (ध्यान देते हुए) ऐसा लग रहा है, जैसे छत पर कोई चल रहा हो। तो क्या हिम्मत राय ठीक कहता था ?

पुष्पा : क्या कहता था हिम्मत राय ?

सक्सेना : यही कि इस भवन मे एक दुखी आत्मा का साया है। प्रेम की मारी राजकुमारी ने इस भवन में आत्म-हत्या की थी। तभी से उसकी आत्मा यहाँ भटक रही है।

पुष्पा : तब तुमने यह मकान लिया ही क्यो ?

सक्सेना : इसलिए पुष्पा, क्योंकि मैं जानता हूँ कि आत्मा के पांव नही

होते। वह चल नहीं सकती। यह सब भ्रांतियाँ हैं, अंधविश्वास है।

पुष्पा : फिर यह कौन है जो चल रहा है?

सक्सेना : कोई और हो सकता है। रुको! मैं जाकर देखता हूँ।

पुष्पा : नहीं, नहीं, तुम नहीं जाओगे। (चीखकर) नहीं जाओगे तुम।

[पुष्पा ने दूसरे कमरे में सुधीर और सुमन को जगा दिया है। चारों खामोश पलंग पर बैठे हैं। आवाज़ निरंतर आ रही है।]

सुधीर : मम्मी, मैं और पापा जाकर देखते हैं। हो सकता है, कोई चोर हो।

पुष्पा : अरे पगले, चोर होता तो चुपचाप घर में आ जाता। छत पर चहलकदमी क्यों करता।

सुधीर : मम्मी, लेकिन यह तो हो सकता है कि कोई व्यक्ति केवल हमें डराने के लिए ऐसा कर रहा हो।

पुष्पा : कोई हमें क्यों डराएगा। हम इस शहर में नये हैं। हमें कोई जानता तक नहीं। हमारी किसी से दुश्मनी नहीं।

सुमन : तो मम्मी! जो कुछ हो रहा है, होने दो, हमें इन आवाज़ों से कोई हानि तो पहुँच नहीं रही। हम क्यों दुखी हों। जब कोई नीचे आकर हमसे उलझेगा तो देख लेंगे।

[चारों आपस में बात कर रहे हैं। तभी अचानक कदमों की आवाज़ रुक जाती है और सितार की आवाज़ आने लगती है।]

सक्सेना : हिम्मत राय यह भी कहता था कि पहले छत से किसी व्यक्ति के चलने की आवाज़ आती है, फिर सितार पर कोई दर्दीले गीत छेड़ देता है। यह राजकुमारी की आत्मा है।

पुष्पा : मैं कहती हूँ, यह मकान छोड़ दो। हम यहाँ नहीं रहेंगे।

सक्सेना : कुछ दिन प्रतीक्षा करो। ऐसी जल्दी क्या है। फिर शहर में इतनी आसानी से मकान मिलते कहाँ हैं।

पुष्पा : सुनो! सितार की आवाज़ निरंतर आ रही है। आधी रात को कौन छत पर सितार बजाने आएगा। हो-न-हो, यह राजकुमारी की आत्मा ही है।

सुधीर : चलो हम सब इकट्ठे होकर छत पर चलते हैं। देखें क्या है?

पुष्पा : आत्मा दिखाई तो देती नहीं। मूर्ख मत बनो।

पिया। सातवें दिन उसने अपने प्रेमी के वियोग में तड़प-तड़पकर आत्महत्या कर ली। तभी से इस भवन में उसकी आत्मा भटक रही है।

सक्सेना दुखद घटना है। लेकिन उसकी आत्मा अब भी इस भवन में भटक रही होगी। मैं नही मानता?

हिम्मत राय न मानें साहब। आपसे पहले जो भी किरायेदार यहाँ आया, उसने आधी रात को छत पर किसी के टहलने और सितार पर बजते हुए दर्दीले गीत जरूर सुने। कोई भी दो-चार दिन से अधिक यहाँ नही रहा।

सक्सेना . हम भी देखते हैं, एक तजुर्बा करके। कम-से-कम राजकुमारी की आत्मा से मुलाकात तो करेंगे ही।

हिम्मत राय : आप जानें साहब। हमने तो जो सच्चाई थी, बता दी।

[दृश्य-परिवर्तन, फ्लैश बैंक]

[रात का समय है। पी. सी. सक्सेना, उसकी पत्नी पुष्पा कमरे में सोये हुए हैं, दूसरे कमरे में सुधीर और सुमन हैं। पूरा भवन खामोशी की चादर में लिपटा हुआ है। घडी की टिक-टिक के अतिरिक्त और कोई आवाज़ नही।]

पुष्पा : (चौंककर उठते हुए) अरे! छत पर यह कैसी आवाज है। ऐसा लगता है जैसे कोई ऊपर टहल रहा हो। (कुछ देर तक आवाज पर ध्यान लगाए रखती है फिर घबराकर पति को जगाती है।)

सक्सेना (अगडाई लेते हुए) अरे भई क्यो परेशान करती हो। क्या हो गया?

पुष्पा सुनो, ऊपर से यह कैसी आवाज आ रही है।

सक्सेना : (ध्यान देते हुए) ऐसा लग रहा है, जैसे छत पर कोई चल रहा हो। तो क्या हिम्मत राय ठीक कहता था?

पुष्पा : क्या कहता था हिम्मत राय?

सक्सेना : यही कि इस भवन में एक दुखी आत्मा का साया है। प्रेम की मारी राजकुमारी ने इस भवन मे आत्म-हत्या की थी। तभी से उसकी आत्मा यहाँ भटक रही है।

पुष्पा : तब तुमने यह मकान लिया ही क्यो?

सक्सेना : इसलिए पुष्पा, क्योंकि मैं जानता हूँ कि आत्मा के पांव नहीं

होते। वह चल नहीं सकती। यह सब भ्रांतियाँ हैं, अंधविश्वास है।

पुष्पा : फिर यह कौन है जो चल रहा है?

सक्सेना : कोई और हो सकता है। रुको! मैं जाकर देखता हूँ।

पुष्पा : नहीं, नहीं, तुम नहीं जाओगे। (चीखकर) नहीं जाओगे तुम।

[पुष्पा ने दूसरे कमरे में सुधीर और सुमन को जगा दिया है। चारों खामोश पलंग पर बैठे हैं। आवाज़ निरंतर आ रही है।]

सुधीर : मम्मी, मैं और पापा जाकर देखते हैं। हो सकता है, कोई चोर हो।

पुष्पा : अरे पगले, चोर होता तो चुपचाप घर में आ जाता। छत पर चहलकदमी क्यों करता।

सुधीर : मम्मी, लेकिन यह तो हो सकता है कि कोई व्यक्ति केवल हमें डराने के लिए ऐसा कर रहा हो।

पुष्पा : कोई हमें क्यों डराएगा। हम इस शहर में नये हैं। हमे कोई जानता तक नहीं। हमारी किसी से दुश्मनी नहीं।

सुमन : तो मम्मी! जो कुछ हो रहा है, होने दो, हमें इन आवाज़ों से कोई हानि तो पहुँच नहीं रही। हम क्यों दुखी हों। जब कोई नीचे आकर हमसे उलझेगा तो देख लेंगे।

[चारों आपस में बात कर रहे हैं। तभी अचानक कदमों की आवाज़ रुक जाती है और सितार की आवाज़ आने लगती है।]

सक्सेना : हिम्मत राय यह भी कहता था कि पहले छत से किसी व्यक्ति के चलने की आवाज़ आती है, फिर सितार पर कोई दर्दीले गीत छेड़ देता है। यह राजकुमारी की आत्मा है।

पुष्पा : मैं कहती हूँ, यह मकान छोड़ दो। हम यहाँ नहीं रहेंगे।

सक्सेना : कुछ दिन प्रतीक्षा करो। ऐसी जल्दी क्या है। फिर शहर में इतनी आसानी से मकान मिलते कहाँ हैं।

पुष्पा : सुनो! सितार की आवाज़ निरंतर आ रही है। आधी रात को कौन छत पर सितार बजाने आएगा। हो-न-हो, यह राजकुमारी की आत्मा ही है।

सुधीर : चलो हम सब इकट्ठे होकर छत पर चलते हैं। देखें क्या है?

पुष्पा : आत्मा दिखाई तो देती नहीं। मूर्ख मत बनो।

[होते-होते सुबह के चार बज गए हैं। सितार की आवाज खामोश हो गई है। चारो आदमी मौन हैं।]

[दृश्य-परिवर्तन]

सक्सेना (महाराज सिंह से उन्ही के कमरे मे) सात दिन से लगातार यही तमाशा हो रहा है, जो पहले दिन हुआ था, राजा साहब !

महाराज सिंह : यानी, आधी रात के समय पहले छत पर चलने की आवाज आती है, फिर सितार का स्वर गूँजने लगता है।

सक्सेना : जी हाँ राजा साहब ! पुष्पा तो मारे खौफ के घुली जा रही है। सुमन को भी विश्वास हो चला है कि इस घर मे राजकुमारी की आत्मा का साया है।

महाराज सिंह (उदास स्वर मे) हाँ, वह एक ऐसी घटना थी, जिसने इस घर के शानदार इतिहास पर कालिख पोत दी। (कुछ क्षण रुक कर) घटनाएँ होती हैं, बीत जाती हैं, लेकिन यह घटना तो ऐसी है, जो लगता है गुजर नही रही है, बीत नही रही है। (ठण्डी साँस भरकर) कभी-कभी बहुत दुख होता है, शर्म भी आती है।

सक्सेना अब दिन छिपने को है, अभी से पुष्पा और सुमन के दिल धड़कने शुरू हो जाएगे। वह खौफ के मारे सो नही पाएगी।

महाराज सिंह तो क्या आप भी अब यहाँ से जाने की सोच रहे हैं, सक्सेनाजी, आपका विश्वास भी डिग गया ?

सक्सेना सवाल मेरा नही राजा साहब ! पुष्पा और सुमन का है। सुमन भी भयभीत हो चली है। पहले वह इन बातो को नही मानती थी, लेकिन अब… ।

महाराज सिंह : समझ मे नही आता, महल के इस भाग को कैसे बचाया जाए, सोचा था, आमदनी बढेगी तो हिम्मत राय को तनखाह तो मिलती ही रहेगी।

सक्सेना : राजा साहब ! मैं नही चाहता कि भवन छोडकर जाऊ, लेकिन मजबूरी आ पडी है।

महाराज सिंह : (उदास स्वर मे) हिम्मत राय भला आदमी है। कई-कई माह तक उसे कुछ भी नही मिल पाता, लेकिन उसके माथे पर शिकन नही आती, वह बराबर सेवा करता रहता है।

सक्सेना : मुझे अफसोस है राजा साहब ! अब यहाँ रहना सम्भव नही रहा है।

महाराज सिंह : आप भी जाइये सक्सेना, आप भी जाइये। छोड़िए इस भवन को राजकुमारी की आत्मा के लिए।

[अचानक सुधीर मुख्य द्वार से दाखिल होते हुए]

सुधीर : पापा, पापा ! आइये, आइये मेरे साथ। मैंने देख लिया है, राजकुमारी की आत्मा को। वह मेरे सामने प्रकट हो गई है।

महाराज सिंह : भोला लड़का, कैसी अनहोनी बात कर रहा है। (सुधीर को सम्बोधित करते हुए) आत्माओं की यों खिल्ली नही उड़ाते बेटे। मज़ाक़ क्यों करते हो ?

सुधीर : मज़ाक़ नही राजा साहब ! मैंने सचमुच ही उस आत्मा को देख लिया है।

[दोनों बाप-बेटे उठकर एक तरफ़ चले जाते हैं।]

सुधीर : पापा ! अभी जब मैं शहर से आ रहा था तो मैंने सुना, हिम्मत राय अपनी पत्नी से बात कर रहा था।

सक्सेना : क्या कह रहा था हिम्मत राय ?

[दृश्य-परिवर्तन]

हिम्मत राय : यह नये किरायेदार तो बहुत ही हठीले निकले। सात दिन हो गए, टस से मस नही हुए। अब से पहले तो कोई भी दो-तीन दिन से अधिक नही टिका था।

कलावती : लगता है, नास्तिक हैं, आत्माओं पर विश्वास नही करते।

हिम्मत राय : लेकिन मेरा नाम भी हिम्मत राय है, कलावती। हिम्मत हारने वाला नही हूँ। देखता हूँ कब तक टिकते हैं।

कलावती : मुझे नही लगता कि अब यह लोग यहाँ से भागेंगे।

हिम्मत राय : भागेंगे नहीं, भगाए जाएँगे।

कलावती : सात दिन तो हो गए। अब कहाँ तक प्रतीक्षा करोगे। कहाँ तक रात-रात भर जागोगे। मुझे तो अब आस नही रही।

हिम्मत राय : कैसी बात करती हो कलावती ! आस तोड़ोगी तो कैसे काम चलेगा। दस व्यक्तियों के परिवार को कहाँ ले जाओगी।

[दृश्य-परिवर्तन]

[आधी रात का समय है। छत से पहले चहलकदमी की आवाज़ आई, फिर सितार बजने लगा है।]

सक्सेना : (सुधीर को इशारा करते हुए घर से बाहर निकल आता है) आओ सुधीर, जल्दी करो।

पुष्पा कहाँ जा रहे हो इस समय, ठहरो।

सक्सेना तुम खामोश बैठो और देखती जाओ क्या होता है।

सुधीर मम्मी, हमने जान लिया कि आत्माओं के भी पाँव होते हैं। देखते हैं कहाँ भागकर जाती है वह !

[पुष्पा और सुमन दोनों चीखती हुई सक्सेना और सुधीर के पीछे चलती हैं। सुधीर, सक्सेना के साथ तेज़ी से सीढ़ियाँ चढ़ते हुए छत पर चढ़ जाता है। राजकुमारी की आत्मा के मुँह से एक भयानक चीख निकलती है।]

सुधीर (ऊँची आवाज़ में) चीखकर डराने की कोशिश मत करो। जो भी कोई तुम हो अपनी जगह रुक जाओ। भागने की कोशिश की तो शूट कर दिए जाओगे।

सक्सेना (आगे बढ़ते हुए) शट-अप ! अगर एक कदम भी आगे बढ़ाया तो गोली तुम्हारी छाती से पार हो जाएगी।

[सुधीर छत से भागने की कोशिश करते हुए हिम्मत राय को थाम लेता है। हिम्मत राय के हाथ से छूटकर सितार नीचे गिर जाता है।]

सक्सेना (टार्च की रोशनी हिम्मत राय के चेहरे पर डालते हुए) अच्छा तो तुम हो राजकुमारी की आत्मा ! बेशर्म, कमीने।

हिम्मत राय (गिड़गिड़ाते हुए) साहब ! शोर न करो मुझे जाने दो। मैं तो स्वयं यह देखने आया था कि बरसों से चल रहा यह तमाशा है क्या ?

सक्सेना तुम यह देखने आए थे। झूठे, कमीने

[सुधीर और सक्सेना दोनों हिम्मत राय को पकड़कर नीचे ले आते हैं। महाराज सिंह भी आधी रात को यह शोर सुनकर बाहर निकल आए हैं।]

सुधीर पापा ! यह आदमी कितने वर्षों से यह ड्रामा कर रहा था। इसे पुलिस के हवाले कीजिए।

सक्सेना . यह फैसला हमें नहीं, राजा साहब को करना है। तुमने तो राजकुमारी की आत्मा का रहस्य खोल दिया, इतना काफी है।

[सब लोग महाराज सिंह की तरफ देखते हैं।]

महाराज सिंह : (भारी स्वर में) हिम्मत राय ! तुमने अच्छा नहीं किया। बस एक मकान के लिए उस घराने से विश्वासघात किया, जहाँ तुम अपने जीवन का बेहतरीन हिस्सा गुजार चुके हो। लेकिन मैं इस अपराध के लिए तुम्हें सजा नहीं दूंगा, तुम्हारी सेवाओं की एक लम्बी अवधि मेरे सामने है। तुमने बड़े राजा साहब, महाराज शमशेर जंग बहादुर का युग देखा है। और तुम उस इतिहास के आखिरी साक्षी हो, जो अब गुजर चुका है।

[महाराज सिंह वापस जाने के लिए मुड़ जाते हैं।]

[पर्दा गिरता है]

कुण्डली



प्रताप सहगल

पात्र परिचय

विनय
कान्ता
हीरा
उमेश
उर्मिल
रामखिलावन पांडे

[ड्राइंग-रूम, मध्यवर्गीय परिवार की आकांक्षाओं के अनुरूप सजा हुआ है, आधुनिक ढंग का सोफा, एक ओर टू-इन-वन, दूसरी ओर स्टीरियो, रिकार्ड-प्लेयर और एम्प्लीफायर्स रखे हुए हैं, एक शेल्फ में कुछ किताबें, सेण्ट्रल टेबुल पर कुछ मैगजीन और ऐश-ट्रे। कमरे में एक कोने में स्टडी-टेबुल लगी है जिस पर टेलीफोन रखा है, सोफे के बाईं ओर स्टैण्ड पर रखे एक गमले में कोई भी फैशन में प्रचलित पौधा लगा हुआ है।

[विनय स्टडी-टेबुल पर बैठा चिट्ठियाँ लिख रहा है। एक चिट्ठी लिखकर उसे पढ़ता है और फिर एक लिफाफे में रख देता है। लिफाफे को चिपकाने के लिए थूक लगाने लगता है कि कान्ता आती है। कान्ता एक क्षण रुककर देखती है।]

कान्ता : औरों को नसीहत और खुद मियाँ फ़जीहत !
विनय : (हड़बड़ाकर) अरे…जल्दी कैसे।
कान्ता : (मेज़ के पास जाकर) यह क्या…यह कोई चाट थी जो चाट रहे थे ?
विनय : ज़रा ध्यान नहीं रहा।
कान्ता : औरों का ध्यान जो ज़्यादा रखते हो, यह लो स्पंज !

[स्पंज की डिबिया उठाकर विनय को देती है।]

विनय : सूखा है।
कान्ता : तो पानी डाल लो…किसे लिख रहे हो चिट्ठियाँ ?
विनय : यूँ ही।
कान्ता : यूँ ही…यूँ ही क्या…
विनय : वो कुण्डली नहीं मिली न उमेश और नीरा की, तो मैंने सोचा, कुछ दोस्तों को लिख दूँ कि और कोई लड़की बतायें।
कान्ता : उमेश को यह सब नहीं पसन्द।
विनय : उससे क्या होता है ?
कान्ता : होता क्यों नहीं, शादी उसे करनी है या तुम्हें ?
विनय : पर मैं जोखिम नहीं ले सकता। मुझे ज्योतिषी जी ने साफ़ तौर पर बता दिया है कि यह शादी कभी कामयाब नहीं हो सकती।
कान्ता : (ज़ोर से पुकारती है) हीरा !

[हीरा तेज़ी से अन्दर आता है।]

हीरा : जी !
कान्ता : पानी !
हीरा : जी।
कान्ता : ज़रा जल्दी।
हीरा : जी।
कान्ता : अरे, जी-जी करता रहेगा या लायेगा भी।

[हीरा तेज़ी से ही अन्दर जाता है। कान्ता कुछ सोच रही है, वह उठकर विनय के पास आ जाती है।]

कान्ता : क्यों न हम कुण्डलियाँ किसी और ज्योतिषी को दिखा लें। सूर्य-सिद्धान्त से नहीं मिलती और बृहद् जातक से मिलवा लें।
विनय : (विनय को यह बात पसन्द नहीं आती, उसका चेहरा थोड़ा उदास हो जाता है) उससे क्या होगा ?

कान्ता होगा क्यो नही, हो सकता है इस ज्योतिषी ने कुण्डली ठीक से न मिलाई हो।

विनय ऐसा नही हो सकता। बडा समझदार है यह ज्योतिषी।

कान्ता हो तो तुम भी बडे समझदार, फिर भी

विनय फिर भी क्या

कान्ता कुण्डली किसी और को दिखानी ही पडेगी।

विनय कुण्डली तो कुण्डली ही होती है, बदल थोडे ही जाएगी?

कान्ता हूँ याद है तुम्हे, परसो जो भिण्डी तुम लाय थ

विनय हाँ।

कान्ता क्या था उनम एकदम सब कानी थी।

विनय बाई चान्स।

कान्ता वही चान्स! भिण्डी तो भिण्डी ही होती है, फिर भी तुम लाते हो तो कानी निकलती है। और देखो, हीरा कितनी साफ सुथरी भिण्डी छाँट कर लाता है वही अच्छा है तुमस हीराऽऽ! पानी लाओ!

[हीरा ट्रे मे एक गिलास पानी रखे हुए आता है। वह ट्रे कान्ता के आगे करता है।]

कान्ता इतनी देर लगती है, पानी लाने मे?

[कान्ता पानी का गिलास उठाकर पीने लगती है। विनय मायूस खडा है। उसे भी प्यास है लेकिन कुछ कहता नही।]

हीरा साहब के लिए सब्जी बना रहा था।

कान्ता साहब के लिए सब्जी अलग?

हीरा हाँ।

कान्ता (विनय की ओर देखकर) यह कब स होने लगा?

हीरा साहब कह गए हैं उन्हे बैगन का भुर्ता खाना है।

कान्ता कह गए हैं कौन?

हीरा छोटे साहब।

कान्ता अच्छा, फिर कोई बात नही।

विनय हीरा, एक गिलास पानी मुझे भी पिला दे और थोडा-सा इस स्वज म भी डाल दे।

[हीरा एक गिलास पानी विनय को देता है, विनय पानी लेकर गिलास को टेबुल पर रख देता है। उमेश का प्रवेश। उसके हाथ म दो-तीन रिकाड हैं। रिकार्ड किसी भी प्रचलित आधुनिक धुन

के हो सकते हैं। उमेश रिकार्ड को खोलकर रिकार्ड-प्लेयर पर लगाता है। साथ ही…]

उमेश : मम्मी, आज आप जल्दी कैसे आ गयी?

कान्ता : टूर पर जाना है, बेटे?

उमेश : कब?

कान्ता : कल सुबह की फ्लाइट है।

विनय : कुछ खास काम है?

कान्ता : खाली बैठे चिट्ठियाँ लिखते रहने से तो कुछ खास ही होगा।

विनय : बस वही!

[धीरे-धीरे संगीत उभरता है। उमेश सोफ़े पर बैठा-बैठा ही पाँव हिलाने लगता है। कभी सिर झूमता है तो कभी चुटकियाँ बजाता हुआ संगीत का आनन्द लेता हुआ लगता है।]

कान्ता : और क्या? उमेश, जानते हो, तुम्हारे पापा किसको चिट्ठियाँ लिख रहे हैं?

विनय : उमेश को क्यों घसीटती हो! अभी तो लिख ही रहा हूँ। पोस्ट तो नहीं की।

कान्ता : तुम्हारा बस चले तो खुद ही पोस्टमैन बनकर अभी पहुँचा भी आओ।

उमेश : मम्मी! मुझे म्यूजिक सुनने दो न। क्या फर्स्ट क्लास धुन है।

कान्ता : मैंने तुम्हारे बारे में नार्थ स्टार के मैनेजर से बात कर ली है।

विनय : क्या?

कान्ता : चुप भी रहो, पूरी बात तो सुन लो…यह क्या…

[विनय पानी का गिलास उठाकर एक घूँट भरने लगता है, लेकिन कान्ता के 'चुप भी रहो' कहते ही हड़बड़ाहट में आधा पानी मुंह के अन्दर और आधा मुंह के बाहर रह जाता है। कान्ता के 'यह क्या' कहने के साथ ही बजाय तौलिये के, कुर्ते के पल्ले से मुंह पोंछने लगता है।

[उमेश पहले तो हँस पड़ता है। लेकिन क्षण-भर बाद गम्भीर हो जाता है।]

उमेश : मम्मी! आखिर ये माजरा क्या है?

कान्ता : माजरा! पूछो अपने पापा से।

[म्यूजिक पार्श्व में चला जाता है।]

उमेश पापा ! क्या हुआ ? आखिर यह सब जब से लौटा हूँ, यही सब देख रहा हूँ

विनय कुछ नही बेटा ! (मुस्कराते हुए) तुम्हारी मम्मी हैं बड़ी अफसर । मैं हूँ दफ्तर म एक मामूली ओहदे पर । वो अपनी आदत स मजबूर हैं और मैं अपनी स । बस, इतनी-सी बात है और क्या, रिलक्स

उमेश यह तो घर है । आप लोग तो दफ्तर के मुखौटे घर म भी चढाए रहते हैं घर को दफ्तर क्या बना रहे हैं ?

विनय अरे, छोडो भी यह देखो, मैंने कुछ खत लिखे हैं अपने दोस्तो को ।

उमेश किसलिए ?

विनय देखो, तुम्हे अच्छी नौकरी पर लगाने की जिम्मदारी तो तुम्हारी मम्मी की है और नार्थ-स्टार के मैनेजर स उसने बात कर भी ली है, लेकिन तुम्हे एक अच्छी बीवी दिलाने की जिम्मेदारी तो मेरी है ।

उमेश (जोर से हँसता है) वाह-वाह पापा ! अच्छी बीवी की गारण्टी कब स मिलने लगी ? पापा ! आप अगर नौकरी छोड दें तो कैसा रहे ?

विनय मतलब ?

उमेश अब देखिए न ! रखा क्या है इस नौकरी म ? मिलता ही क्या है। नौकरी छोडिए और घर म ही एक दफ्तर खोल लीजिए । बाहर बोर्ड लगा दीजिए फर्म का नाम आप कुछ भी रख सकते हैं । जैसे विनय एण्ड कम्पनी या कामदिलाऊ दफ्तर की तरह से बीवी दिलाऊ । (विनय कुछ बोलने लगता है। किन्तु उमेश उसे बीच म टोक देता है।) एक मिनिट प्लीज मेरा आइडिया सुन लीजिए । फिर बोलिए हाँ, तो उस फर्म का विज्ञापन दीजिए, समाचार पत्र, टी० वी० और रेडियो मे (विज्ञापन म ही बोलने लगता है) "आप होनहार नौजवान हैं लेकिन शादी के लिए परेशान हैं अब आपको निराश होने की जरूरत नही हम आपको दिलवा सकते हैं एक खूबसूरत, कमाऊ और पतिव्रता बीवी गारण्टी पाँच साल टिंग टिंग टिंग "

[विनय और कान्ता दोनो हँसने लगते हैं ।]

वाह वाह मम्मी पापा ! आप जब दोना मिलकर हँसते हैं न, तो लगता है कि मूसलाधार बारिश के साथ-साथ ओले भी गिर रहे हैं हाँ, तो अब बताइए कि मसला क्या है ?

[उर्मिल का प्रवेश । क्षण भर के लिए सभी को देखती है और असमजस की-सी स्थिति म ही बानती है ।]

उर्मिल : मैं अभी आई।

[अन्दर चली जाती है।]

कान्ता : मसला यह है कि तुम्हारी शादी नीरा से नहीं हो रही है।
उमेश : (आश्चर्य से) व्हाट !
कान्ता : हाँ, दैट इज।
उमेश : ओह नो ! यह कैसे हो सकता है ?
विनय : चाहता तो मैं भी यही हूँ कि तुम्हारी शादी नीरा से ही हो। कितनी सुशील है वो, लेकिन मजबूरी है।
उमेश : कैसी मजबूरी ?
विनय : तुम्हारी और उसकी कुण्डली नहीं मिलती।
उमेश : उससे क्या होता है ?
विनय : होता कैसे नहीं। जहाँ कुण्डली ही नहीं मिलती, वहाँ और क्या मिलेगा…कुछ नहीं।

[उर्मिल अन्दर ड्राइंग-रूम में ही आ जाती है और वह रिकार्ड-प्लेयर को बन्द कर देती है।]

उर्मिल : कमरे में कोई साँप घुस आया है क्या ?
उमेश : नहीं, अजगर, उसने मुझे चारों तरफ से जोर से कस लिया है ?
उर्मिल : अजगर ! कहाँ है ?
उमेश : (फैंटेसी के माध्यम से उमेश की मानसिकता की अभिव्यक्ति) तुम्हें नजर नहीं आ रहा है। आ भी कैसे सकता है। मुझे नजर आ रहा है। यह अन्धविश्वास का अजगर है, और वो मुझे भींचे जा रहा है…जोर से…ओफ मैं…हाँप…रहा हूँ…मैं टूट रहा हूँ…हटाओ इसे…दूर और दूर…
विनय : यह अन्धविश्वास नहीं, शुद्ध विज्ञान है, ज्योतिष एक पूरा विज्ञान है। उसे न समझने के कारण ही अन्धविश्वास पैदा होता है।

[तभी फ़ोन की घण्टी घनघना उठती है। सभी की नज़रें फ़ोन की ओर चली जाती हैं। विनय रिसीवर उठाता है।]

विनय : हलो…जी…हाँ, हैं। होल्ड ऑन प्लीज (कान्ता से) तुम्हारा…
कान्ता : (फ़ोन के पास जाकर रिसीवर पकड़ती है।) हलो…हाँ, सर…गुड आफ्टर नून सर…आप कब आए…अच्छा… कोई खास काम है…ओ० के०…यस…यस…आल राइट…हूँ…ओ० के०…
कान्ता : (रिसीवर रखते हुए) मैं जा रही हूँ…मि० मुखर्जी ने बुलाया है।

विनय : अभी तो आई थी···

कान्ता : हाँ, टूर पोस्टपोन हो गया है। अभी वहाँ एक जरूरी मीटिंग है, पर जाने से पहले एक बात कहे जा रही हूँ। मेरी राय में उमेश की शादी नीरा से ही होनी चाहिए। इन दोनों की ज़िन्दगी खराब करने का हमें कोई हक नहीं।

विनय तुम्हारी राय मिली। हमें विचार करने दो। और उर्मिल, तुम्हारा *क्या ख्याल है?*

[कान्ता चली जाती है।]

उर्मिल : यह कुण्डली कागज की है कि साँप की···मैं तो कहती हूँ इसे उठाओ" और फाड़कर जला दो···नीराजी कितनी अच्छी हैं, मुझे तो वही भाभी चाहिए।

विनय : (सोचने की मुद्रा में) मुझसे नहीं होगा यह।

उमेश . *(स्वगत) क्या करूँ अब? पापा तो मान ही नहीं रहे···अब मुझे* लड़ना होगा···पर किससे···पापा से? नहीं, इस व्यवस्था से। ग़लत-सलत बातों से, घिसे-पिटे विश्वासों से···मैं इसके लिए यूनियन बनाऊँगा। हाँ···मैं लड़ूँगा···(उमेश चिल्ला उठता है) घिसे-पिटे विश्वासों को···खत्म करो, गले-सड़े रिवाजों को खत्म करो, खत्म करो···

['खत्म करो' के साथ ही वह बाजू ऊपर उठाता है कि विनय उसका बाजू पकड़ लेता है।]

विनय · क्या हुआ···उमेश?

उमेश : कुछ नहीं।

विनय : यह नारे क्या लगा रहे थे तुम?

उमेश : आपके खिलाफ़!

विनय . लगाओ, कोई बात नहीं।

उमेश पापा! जब आपकी शादी हुई थी तो कुण्डली मिलाई थी?

विनय : (गर्व से) बिल्कुल।

उमेश तभी यह हालत है।

विनय . क्या मतलब है?

उमेश : (मुस्कराकर) कुछ नहीं, मैं तो यूँ ही गिनती गिन रहा था।

विनय . गिनती गिन रहा था या मेरा मज़ाक उड़ा रहा था?

उमेश : मम्मी की ड्यूटी मैं क्यों करूँ?

विनय : ठीक है बेटा—कर लो। तुम भी कर लो, मैं न तो भिण्डी ठीक खरीद सकता हूँ, न करेला, लेकिन तुम्हारी शादी जरूर ठीक करवाऊँगा।

उमेश : पापा। एक काम नहीं हो सकता।

विनय : क्या ?

उमेश : यही कि आप ठीक भिण्डी-करेला खरीदना सीख लें और यह शादी वाला मामला रहने दें।

विनय : ठहर तो सही।

[विनय उमेश की ओर लपकता है, लेकिन उमेश कमरे से बाहर निकल जाता है। विनय स्टडी-टेबुल के पास आकर खड़ा हो जाता है। चिट्ठियाँ उठाकर देखता है। उन्हें उलटता-पलटता है और फिर ड्राअर में डाल देता है। फ़ोन के पास आकर रिसीवर उठाता है। फिर कुछ क्षण सोचता है। नम्बर घुमाता है, लेकिन बीच में ही काटकर रिसीवर रखकर और सोफ़े के बीचों-बीच आकर बैठ जाता है।]

[दृश्य-परिवर्तन]

[एक छोटा कमरा। कमरे मे सफ़ेद चद्दर बिछी है। दो मसनदें लगी हैं। एक ओर कई देवी-देवताओं की तस्वीरें हैं। तस्वीरों के सामने फूल पड़े हैं, धूप जल रही है। रामखिलावन पाण्डे माथे पर तिलक लगाए अपने आसन पर विराजमान हैं। गले में रुद्राक्ष की माला है। परम्परागत ज्योतिषी की वेशभूषा में है।

[रामखिलावन किसी की कुण्डली बनाने में व्यस्त है। कभी कोई किताब खोलते हैं। कभी कोई काग़ज पर निशान बनाते हैं तो कभी 'हाँ' हूँ की मुद्रा में सिर हिलाते हैं।

[उमेश कमरे के अन्दर दाखिल होता है। पाण्डेजी इतने तल्लीन हैं कि उन्हें उमेश के आने का कुछ पता नहीं चलता।

[उमेश एक मसनद का सहारा लेकर बैठ जाता है तो पाण्डेजी को पता चलता है।]

पाण्डे : अरे, तुम कब आए ?

उमेश : हो गए हैं दो दिन।

पाण्डे : दो दिन ! मैं कहाँ था ?

उमेश : यहाँ तो अभी आया हूँ।
पाण्डे : अच्छा ! अच्छा ! कहो !
उमेश : पण्डितजी, आपने तो बडी गडबड़ कर दी।
पाण्डे : मैंने ?
उमेश : हाँ, आपने ?
पाण्डे : कहो भी, क्या हुआ है ?
उमेश : होना क्या था, आपने कुण्डली ही नही मिलने दी।
पाण्डे : नही मिलने दी, क्या मतलब है तुम्हारा ? मैं कोई राहु-केतु हूँ जो बीच मे बैठ जाऊँगा।
उमेश : मैं नही जानता। इस वक्त तो आप राहु-केतु से भी बड़े ग्रह साबित हो रहे हैं।
पाण्डे : जब ग्रह ही नही मिलते तो मैं क्या कर सकता हूँ ? मैंने जो करना था, वह कर दिया। अब जो तुम्हारे जी मे आए सो कर लो।
उमेश : कर तो लूँ पण्डितजी, पर मैं पापा का मन नही दुखाना चाहता। इस-लिए आपके पास आया हूँ। आप ही कोई रास्ता निकालिए।
पाण्डे : असम्भव !
उमेश : कुछ भी नही हो सकता ?
पाण्डे : बिलकुल नही।
उमेश : आप ऐसा करिए न, किसी ग्रह को घुमा-फिराकर इधर-उधर बिठा दीजिए।
पाण्डे : यह ज्योतिष है, कोई पॉप म्यूजिक नही। जब जैसे चाहो, बजा लो। ग्रहो की दशा हम नही बदल सकते।
उमेश : आप चाहे तो सब हो सकता है।
पाण्डे : असभव !
उमेश : (उमेश इस बार सौ का नोट हाथ मे निकालकर दिखाते हुए कहता है।) पण्डितजी !
पाण्डे : हूँ···तो यह बात है···जरा सोचने दो।

[पाण्डे लपककर सौ रुपये का नोट ले लेता है और अपने आसन के नीचे रख लेता है।]

पाण्डे : लक्ष्मीजी की कृपा से शायद कुछ सम्भव हो जाए।
उमेश : देखिए···देखिए···आप मिलाइए, चाहे न मिलाइए। बस, पापा से इतना कह दीजिए कि हम दोनो की···नही मेरा मतलब है कि मेरी और नीरा की कुण्डली मिलती है।

पाण्डे : ठहरो बेटा, देखने तो दो।

[पाण्डे कुण्डलियों के ढेर में से दो कुण्डलियाँ निकालता है।]

पाण्डे : हूँ...यह रही नीरा की कुण्डली और यह रही तुम्हारी। नीरा... उमेश।

[पाण्डे थोड़ी देर तक देखता रहता है। इधर-उधर देखता रहता है और 'नहीं' की मुद्रा में सिर हिलाता रहता है। उमेश परेशान है। वह पचास का एक नोट हाथ में लेकर कहता है—]

उमेश : पण्डितजी ! लक्ष्मीजी का वजन कम पड़ता हो तो बढ़ा लीजिए।

पाण्डे : नहीं बेटा ! यह बात नहीं, यह तो बहुत गड़बड़ है। जरा देखने दो। बात बनती नजर तो आए।

उमेश : यह तो रखिए।

[पाण्डे पचास का नोट लेकर पूर्ववत् भगवान् के चरणों को छुआकर आसन के नीचे रख लेता है।]

पाण्डे : हूँ...अगर यह दिशा इधर हो जाए और यह...नहीं...सोचना पड़ेगा।

[उमेश इतने में पाण्डेजी के पास सरक आता है और दोनों कुण्डलियों को हाथ में लेकर देखने लगता है। दोनों को मिलाने की मुद्रा में उलट-पुलटकर देखता है, फिर एकाएक चौंक पड़ता है।]

उमेश : पण्डितजी ! मिल गयी।

पाण्डे : कैसे ?

उमेश : यह तो मेरी कुण्डली है ही नहीं।

पाण्डे : हैं ! यह कैसे हो सकता है ?

उमेश : मुझे सब याद आ गया। मैंने अपनी कुण्डली आज से सात साल पहले देखी थी। यह वो नहीं है।

पाण्डे : (पाण्डे कुण्डलियाँ अपने हाथ में ले लेता है।) तुम्हारा नाम, जन्म-तिथि यही तो है।

उमेश : हाँ, नाम भी यही है, जन्म-तिथि भी यही है, लेकिन जन्म समय यह नहीं है। मेरा जन्म सुबह ६ बजकर ३६ मिनट पर हुआ था; और इस कुण्डलीवाले उमेश का जन्म शाम के ६ बजकर ३६ मिनट पर हुआ है।

पाण्डे : दिखाना, दिखाना।

कर दिया था बवाडा।

उमेश देखिए ! आपने तो कर दिया था बवाडा।

पाण्ड अरे हां यह तो भूल हो गयी।

[पाण्ड उमेश की असली कुण्डली निकालता है और उससे नीरा की कुण्डली मिलान लगता है।]

उमेश आप इस भूल कह रहे हैं। आपकी इस भूल ने मेरा तो भुरता बना दिया था।

पाण्डे तुम्हारी तो मिलती है। एकदम तुम शादी कर लो, कर लो

उमेश यो ता मैं वैसे भी करता पर लडकर अब करूँगा उडकर और दीजिए वापस डेढ सौ मुडकर।

पाण्डे अरे बेटा ! पण्डित के घर म लक्ष्मी आ सकती है, घर से जा नही सकती और फिर तुम्हारे पापा को भी ता मैं ही समझाऊँगा।

उमेश तो फिर चलो अभी इसी वक्त।

[दृश्य परिवर्तन]

[विनय का वही ड्राइग रूम। विनय फोन पर किसी से बात कर रहा है।]

विनय हाँ हाँ ठीक है अगले हफ्ते ज्वाइन कर लूगा सब ठीक हैं ओ० के०।

[विनय रिसीवर रखता है कि कान्ता अन्दर स आती है।]

कान्ता किसका फोन था ?

विनय पररा का।

कान्ता क्या कह रहा था ?

विनय यू ही अगले हफ्ते ज्वाइन कर रहा हूँ।

[तभी उमेश और पाण्ड आते हैं।]

उमेश पण्डितजी आए हैं मम्मी पापाजी हैं।

विनय पण्डितजी आप इधर कैसे ? और उमश आपको कहाँ मिल गया।

पाण्डे बात यू है विनय बाबू कि बडी गडबड हो गयी थी।

विनय कैसी गडबड ?

पाण्डे नही, अब ठीक है।

कान्ता (डाटती हुई) पर हुआ क्या था ?

पाण्ड कुछ नही, बस कुण्डली जरा गलत मिल गयी थी।

विनय किसकी ?

पाण्डे : उमेश की। दरअसल हुआ यूँ कि एक और उमेश की कुण्डली मेरे पास पड़ी थी। आश्चर्यजनक बात तो यह है कि दोनों का नाम उमेश। बाप का नाम एक। जन्म-तिथि एक।…जन्म का समय भी ६ बजकर ३६ मिनट।

विनय : तो ?

पाण्डे : बस सुबह-शाम का फर्क पड़ गया। अपने उमेश का जन्म तो सुबह का है न ?

कान्ता : तो क्या सुबह और शाम में आपको कोई फर्क नज़र नहीं आता ?

पाण्डे : आता तो है, पर आजकल नज़र ज़रा कमज़ोर हो गयी है।

कान्ता : हे भगवान ! शुक्र हुआ, कुण्डली ही ग़लत मिली थी…नहीं तो…

विनय : अरे, नहीं तो कुछ नहीं। मैंने भी फ़ैसला कर लिया था कि कुण्डली मिले या नहीं, मुझे उमेश की शादी नीरा के साथ कर देनी है।

उमेश : पापा !

विनय : हाँ बेटे, हमारा वक्त तो अब बीत गया। बिना कुण्डली मिलाए लाखों शादियाँ होती हैं, तो क्या वे सभी असफल होती हैं, ? यह तो मन का भ्रम है।

पाण्डे : तो मैं जाऊँ ?

उमेश : पण्डितजी ! लक्ष्मी !

पाण्डे : वो तो बेटा, मैं घर पर ही छोड़ आया।

[तभी फ़ोन की घण्टी घनघना उठती है। विनय फ़ोन उठाता है।]

विनय : हलो ! हाँ…कैसे हो बेटे ? पापा कैसे हैं…हाँ कभी आओ, हाँ, होल्ड करो…(उमेश से) लो, नीरा का फ़ोन आया है। तुमसे बात करना चाहती है।

[पर्दा गिरता है]

ओझा

□

प्रेमचन्द

पात्र-परिचय

डाक्टर . जयपाल
बुद्धू चौधरी . ओझा
माँ : डाक्टर की माताजी
अहिल्या डाक्टर की पत्नी
जगिया डाक्टर की सेविका
बुढ़िया : ओझा की माँ

[प्रेमचन्द की कहानी 'मूठ' का नाट्य रूपान्तर। रूपान्तरकार—महेश साक्षधर]

दृश्य एक

[छोटा घर जिस पर बहुत नीचा छप्पर। आगे छप्पर पर एक बाँस म लहराती गेरुए रंग की झंडी। चौरे पर मिट्टी के सिन्दूर से रँगे हाथी। कई नोकदार त्रिशूल जमीन मे गडे हुए। समय रात्रि के दस बजे। बुद्धू चौधरी टूटे फटे एक टाट पर बैठा नारियल का हुक्का पी रहा है। उसके पास एक बोतल और गिलास रखा है। बुद्धू एक फटा हुआ तहबन्द पहने है। उसके बायें बाजू मे एक ताबीज बँधा है। उससे थोडी दूर एक बुढिया लहँगा, चोली पहने बैठी है। बाहर से हाथ मे बेंत लिये डाक्टर जयपाल का आगमन]

डाक्टर : अरे, बुद्धू चौधरी हैं क्या ?

बुद्धू : (हुक्का पीना रोककर) कौन ?

डाक्टर : मैं डाक्टर जयपाल—

बुद्धू : (हड़बड़ाकर बोतल, गिलास छिपाते हुए) आइये सरकार ! नमस्ते !

डाक्टर : नमस्ते चौधरी !

बुद्धू : हुक्म कीजिये हुजूर, इतनी रात में कैसे तकलीफ की ?

डाक्टर : वह बात यह है बुद्धू चौधरी···

बुद्धू : हाँ, हाँ ! कहिए हुजूर···

[बुढ़िया एक मोढ़ा लाती है]

बुढ़िया : लीजिये। बैठ जाइये।

[डाक्टर बैठ जाता है]

डाक्टर : आज मेरे पाँच सौ रुपये···

बुद्धू : अच्छा ! कैसे ?

डाक्टर : बीमे के रुपये लेकर डाकिया आया था। बम्बई के एक कारखाने ने लाभ से साढ़े-सात सौ रुपये भेजे थे। रुपये मैं बैंक में जमा करने जाने ही वाला था कि तभी एक रोगी आ गया सो वहीं सन्दूक में रखकर ताला डाल रोगी देखने चला गया। लौटा तब तक बैंक का समय निकल चुका था। शाम को घर आते समय जब संदूक खोला तो पूरे पाँच सौ कम निकले। सब जगह छान मारी कुछ पता नहीं चला।

बुद्धू : (गम्भीर होकर) हूँ।

डाक्टर : बड़ी गाढ़ी कमाई के थे बुद्धू चौधरी। एक-एक पैसा करके जोड़ा; न अच्छा खाया न पहना। (उदास होकर गहरी साँस लेकर) अब तुम्हीं पता लगा सकते हो।

बुद्धू : (उत्साह से) यह कौन बड़ी बात है हुजूर। इसी इतवार को दरोगा जी की घड़ी चोरी हो गयी थी। बहुत कुछ तहकीकात की, कुछ भी पता न चला। मुझे बुलाया था। मैंने बात की बात में पता लगा दिया। पाँच सौ रुपये इनाम दिये। कल की बात है जमादार साहब की घोड़ी खो गयी थी। चारों तरफ दौड़ते फिरते थे। मैंने ऐसा पता बता दिया कि घोड़ी चरती हुई मिल गयी। इसी विद्या के बल पर हुजूर हुक्काम सभी मानते हैं।

डाक्टर . (मुंह बनाकर) मैं केवल चोरी का पता लगाना नहीं चाहता, मैं चोर को सजा देना चाहता हूँ।

बुद्धू : (आँखें बन्द कर, जम्हाइयाँ लेकर चुटकी बजाता है) यह घर के ही किसी आदमी का काम है।

डाक्टर : कुछ परवाह नहीं, किसी का हो।

बुढ़िया : पीछे से कुछ बात बनेगी-बिगड़ेगी तो हुजूर हमी को बुरा कहेंगे।

डाक्टर : इसकी तुम चिन्ता न करो। मैंने खूब सोच समझ लिया है बल्कि यदि घर के किसी आदमी की शरारत है तो मैं उसके साथ और कड़ाई करना चाहता हूँ। बाहर का आदमी छल करे तो क्षमा के योग्य है किन्तु घर के आदमी को मैं किसी प्रकार क्षमा नहीं कर सकता।

बुद्धू : तो हुजूर क्या चाहते हैं ?

डाक्टर : बस यही कि मेरे रुपये मिल जायें और चोर किसी बड़े कष्ट मे पड़ जाये।

बुद्धू : मूठ चला दूं।

बुढ़िया : ना बेटा, मूठ के पास न जाना, न जाने कैसी पड़े कैसी न पड़े।

डाक्टर : तुम मूठ चला दो। इसका जो मेहनताना और इनाम हो, मैं देने को तैयार हूँ।

बुढ़िया : (बुद्धू से) बेटा, मैं फिर कहती हूँ मूठ के फेर में मत पड। कोई जोखम की बात आ पड़ी तो यही बाबूजी फिर तेरे सिर होंगे और तेरे बनाये कुछ न बनेगी। क्या जानता नहीं मूठ का उतार कितना कठिन है ?

बुद्धू : हाँ, बाबूजी, फिर एक बार अच्छी तरह सोच-समझ लीजिए। मूठ तो मैं चला दूंगा लेकिन उसको उतारने का जिम्मा मैं नहीं ले सकता।

डाक्टर : अजी कह तो दिया मैं तुमसे उतारने को न कहूँगा। चलाओ भी तो...

बुद्धू : हुजूर ! उसके लिए नारियल, सामग्री, वस्त्र, लौंग, धूप, कपूर, घी आदि की आवश्यकता होगी।

डाक्टर : कोई बात नहीं। ये सब तुम स्वय ले लेना—मैं रुपये दिये देता हूँ। (देता है) लो ! ऐसा मन्त्र चलाओ कि सवेरा होते-होते चोर मेरे सामने माल लिये आ जाये।

बुद्धू : (रुपये लेते हुए) आप निशाखातिर रहें।

दृश्य : दो

[डाक्टर जयपाल का घर। अहिल्या—डाक्टर की पत्नी, डाक्टर की माँ बरामदे में दो कुर्सियों पर बैठी हैं। नीचे एक फटे टाट पर जमिया लेटी है। जमिया बीच-बीच में उठकर अन्दर जाती है। उसकी हालत से लगता है कि वह बेचैन है।]

अहिल्या : आदमी जाता है तो कहकर जाता है। आधी रात से अधिक हो गयी।

माँ : कोई ऐसी ही अटक हो गयी होगी, नहीं तो वह कब घर से बाहर निकलता है।

अहिल्या : मैं तो अब सोने को जाती हूँ। उनका जब जी चाहे आयें। कोई सारी रात पहरा नहीं देता। (खड़ी हो जाती है।)

माँ : जाने कहाँ चला गया। खाना बिल्कुल पानी हो गया।

[डाक्टर का प्रवेश। अहिल्या उठकर खड़ी हो जाती है और सहमी आँखों से डाक्टर को देखती है।]

माँ : आज कहाँ इतनी देर लगा दी?

डाक्टर : तुम लोग तो सुख से बैठी हो ना? मुझे देर हो गई इसकी तुम्हें क्या चिन्ता? जाओ सुख से सोओ। इन ऊपरी दिखावटी बातों से मैं धोखे में नहीं आता। मौका लग जाए तो गला काटने में भी न चूको और अब चली हो बातें बनाने।

माँ : (दुखी मन से) बेटा! ऐसी जी दुखाने वाली बातें क्यों करते हो? घर में तुम्हारा कौन वैरी है जो तुम्हारा बुरा चेतेगा?

डाक्टर : मुझे कोई अपना मित्र दिखाई नहीं देता। सभी मेरे वैरी हैं, मेरे प्राणों के ग्राहक हैं। नहीं तो पाँच सौ रुपये उड़ जाते? दरवाजा बन्द था, गैर आया नहीं। रुपये रखते ही उड़ गये? जो लोग इस तरह मेरा गला काटने पर उतारू हों उन्हें मैं अपना क्यों समझूँ? मैंने पता लगा लिया है, अभी एक ओझा के पास से आ रहा हूँ। उसने साफ कह दिया है कि घर के किसी आदमी का काम है। ठीक है जैसी करनी वैसी भरनी। मैं भी बता दूँगा कि मैं भी अपने वैरियों का शुभचिन्तक नहीं हूँ। यदि बाहर का आदमी होता तो कदाचित जाने भी देता, पर जब घर के आदमी जिनके लिए रात-

पनको पोसता हूँ, मेरे साथ ऐसा छल करें तो वे [को दोस्त [ति
उनके साथ जरा भी लिहाज न की जाये। देखना कोरे उस दर
की क्या दशा होती है? मैंने ओझा से मूठ चलाने को कह दिया।
इधर मूठ चली और चोर के प्राण संकट में पड़े।

जगिया : (घबड़ाकर) भैया! मूठ में जान जोखम है?

डाक्टर : चोर की यही सजा है।

जगिया : किस ओझे ने चलाया है।

डाक्टर : बुद्धू चौधरी ने।

जगिया : अरे राम! उसका तो उतार ही नहीं।

डाक्टर : मैं क्या करूँ?

[चला जाता है।]

माँ : सूम का धन शैतान खाता है। पाँच सौ रुपये कोई मुँह मारकर ले गया, इतने में मेरे सातों धाम हो जाते।

अहिल्या : कंगन के लिए बरसों से झीक रही हूँ। अच्छा हुआ। मेरी बला पड़ी है।

माँ : भला, घर में उसके रुपये कौन लेता?

अहिल्या : किवाड़ खुले होंगे, कोई बाहरी आदमी उड़ा ले गया होगा।

माँ : उसको विश्वास क्योंकर आया कि घर के किसी आदमी ने इसे चुराये हैं?

अहिल्या . रुपये का लोभ आदमी को शक्की बना देता है।

दृश्य : तीन

[डाक्टर जयपाल पलंग पर सो रहा है। समय : रात्रि के दो बजे।]

अहिल्या : सुनो!

डाक्टर : (सोते हुए) ऊँऽ

अहिल्या : चलकर तो देखो जगिया का क्या हाल है? कुछ बोलती नहीं आँखें पथरा गई हैं, जीभ ऐंठ गई है।

डाक्टर : (उठकर बैठता है) क्या कहा? जगिया को क्या हो गया? मैं यह स्वप्न देख रहा था।

अहिल्या : हाँ, उसकी हालत खराब है।

डाक्टर : (मुस्कराकर) चोर पकड़ा गया। मूठ ने अपना काम किया।

अहिल्या : और जो घर के ही किसी आदमी ने रुपये लिये होते तो?

डाक्टर : तो उसको भी यही दशा होती, सदा के लिए सीख जाता।

अहिल्या : पांच सौ रुपये के लिए प्राण ले लेते?

डाक्टर : पांच सौ रुपये की बात नहीं, आवश्यकता पड़े तो पांच हजार खर्च कर सकता हूँ। केवल छल, कपट को दण्ड देने के लिए।

अहिल्या : बड़े निर्दयी हो।

डाक्टर : तुम्हें सिर से पांव तक सोने से लाद दूं तो तुम मुझे भलाई का पुतला समझने लगोगी। खेद है मैं तुमसे यह सनद नहीं ले सकता। अच्छा चलो। उसे देखें।

[चलते हैं।

[जगिया धरती पर फटे टाट पर पड़ी है। उसके पास ही डाक्टर की मां बैठी है।]

: अरे, इसकी हालत तो बहुत खराब है। ठण्डे पानी के छींटे दो।

[अहिल्या पानी लाती है और छींटे देती है।]

: (स्वगत) मूठ इतनी जल्दी प्रभाव डालेगी इसका तो मुझे गुमान भी न था। ठीक है सजा तो उसे मिलनी ही चाहिये, मगरऽऽ। इतना कष्ट इस बेचारी गरीब को है—देखा नहीं जाता।

[परेशानी से हाथ मरोड़ता है, इधर-उधर घूमता है]

जगिया : आहऽ।

डाक्टर : लो, मैं होश में लाने की दवा देता हूँ।

[दवाएँ मिलाकर प्याले से पिलाता है। जगिया होश में आती है।]

जगिया : हाय राम! कलेजा फुंका जाता है। अपने रुपये ले ले। आले पर हांडी में रखे हैं। मैंने तो ये तीरथ करने को चुराये थे। क्या तुझे तरस नहीं आता? मुट्ठी-भर रुपयों से लिए मुझे आग में जला रहा है। मैं तुझे काला न समझती थी। हाय राम!

[मूर्च्छित हो जाती है।]

डाक्टर : अरे, फिर बेहोश हो गई। मैं तो अपने सारे उपाय कर चुका। अब उसे होश में लाना मेरे वश से बाहर है। मैं नहीं जानता था कि मूठ इतनी घातक होती है। कहीं इसकी जान पर बन गई तो जीवन-

भर पछताना पड़ेगा। आत्मा की ठोकरों से कभी छुटकारा नहीं मिलेगा। क्या करूँ, बुद्धि कुछ काम नहीं करती। सिविल सर्जन को बुलाओ। कदाचित वह कोई अच्छी दवा दे दे।

अहिल्या : किसी को जानबूझकर आग में धकेलना न चाहिए। सिविल सर्जन इससे अधिक कुछ नहीं कर सकता जो मैं कर चुका।

डाक्टर : मैंने डाक्टरी की फर्स्ट क्लास सनद पाई है, समझी! (जगिया को देखते हुए) इसकी दशा तो हर समय गिरती जा रही है। न जाने हत्यारे ने कौन-सा मन्त्र चला दिया। उसकी माँ मुझे बहुत कुछ समझाती रही पर मैंने क्रोध में उसकी बातों की जरा भी परवाह नहीं की।

माँ : बेटा! तुम उसी ओझा को बुलाओ जिसने मन्त्र चलाया है। मर गयी तो हत्या सिर पड़ेगी। कुटुम्ब को सदा सतायेगी।

दृश्य : चार

[बुद्धू चौधरी का घर। समय रात्रि के ३ बजे।]

बुढ़िया : इतनी रात गये कौन है?

डाक्टर : मैं हूँ जो कुछ देर पहले तुम्हारे पास आया था।

बुढ़िया : (स्वगत) ओह! जरूर घर में किसी पर विपद पड़ गयी, नहीं तो इतनी रात गये क्यों आते? पर बुद्धू ने अभी मूठ तो चलायी ही नहीं। मूठ बिना चलाये असर क्यों हुआ! चलो, अब फँस गयी मछली जाल में।

[उठकर चिराग जलाती है।]

डाक्टर : जरा बुद्धू चौधरी को जगा दो।

बुढ़िया : न बाबूजी! इस बखत मैं न जगाऊँगी, कच्चा ही खा जायेगा मुझे। रात को तो लाट साब आवें तो भी नहीं उठता।

डाक्टर : मेरे घर में जगिया की हालत बहुत खराब है। बेचारी गरीब महरी है। जीवन-भर परिवार की सेवा करती रही है। उसका दुःख देखा नहीं जाता। बुद्धू को जगा दो, तुम्हारा बड़ा उपकार होगा।

[बुद्धू आँखें मलता हुआ आता है।]

बुद्धू : कहिए, क्या हुकम है?

बुढ़िया : (खीजकर) तेरी नींद आज कैसे खुल गयी? मैं जगाने गयी होती तो मारने उठता।

डाक्टर : (वुद्ध् से) मैंने सारी बात इन्हें बता दी है।

बुढ़िया : कुछ नहीं, तूने मूठ चलाई थी। रुपये इनके घर की महरी ने लिये थे सो अब उसका अब-तब हो रहा है।

डाक्टर : बेचारी मर रही है। कुछ ऐसा उपाय करो कि उसके प्राण बच जायें।

बुद्धू : यह तो आपने बुरी सुनाई। मूठ फेरना सहज नहीं है।

बुढ़िया : बेटा, जान जोखम का काम है। क्या तू नहीं जानता? कहीं उल्टे फेरने वाले पर ही पड़े तो लेने के देने पड़ जायें।

डाक्टर : अब उसकी जान तुम्हारे बचाये ही बचेगी। इतना धर्म करो।

बुढ़िया : दूसरे की जान की खातिर कोई अपनी जान मुसीबत में डालेगा?

डाक्टर : तुम रात-दिन यही काम करते हो, उसकी सब दाँव, घात जानते हो। मार सकते हो, जिला सकते हो। मेरा तो इन बातों में विश्वास ही न था लेकिन तुम्हारा कमाल देखकर दंग रह गया। तुम्हारे हाथों कितने ही आदमियों का भला होता है। उस गरीब बुढ़िया पर दया करो।

बुद्धू : (प्रभावित होकर) हाँ, हाँ, (सिर हिलाता है।)

बुढ़िया : यह तो सब ठीक है। हमारे भी बाल-बच्चे हैं। न जाने कैसी पड़े कैसी न पड़े? वह हमारे सिर आवेगी न? आप तो अपना काम निकाल-कर अलग हो जायेंगे। मूठ फेरना हँसी नहीं है।

बुद्धू : हाँ, बाबूजी! बड़े जोखम का काम है।

डाक्टर : काम जोखम का है तो मुफ्त में तो नहीं करवाना चाहता?

बुढ़िया : आप बहुत देंगे सौ-पचास दे देंगे। इतने में हम के दिन तक खायेंगे? मूठ फेरना सांप के बिल में हाथ डालना है, आग में कूदना है। भगवान की सीधी निगाह हो तो जान बचती है।

डाक्टर : तो माताजी, मैं तुमसे बाहर तो नहीं होता, जो कुछ तुम्हारी मर्जी हो वह कहो। मुझे तो उस गरीब की जान बचानी है। यहाँ बातों में देर हो रही है वहाँ न जाने उसका क्या हाल होगा?

बुढ़िया : देर तो आप कर रहे हैं। आप बात पक्की करें तो यह आपके साथ चला जाये। आपकी खातिर यह जोखम अपने सिर ले रही हूँ; दूसरा होता तो झट इनकार कर देती। आपके मुलाहजे में पड़कर जानबूझकर जहर पी रही हूँ।

डाक्टर : तुम्हीं बताओ। मैं क्या कहूँ, पर जो कहो झटपट कह दो।

बुढ़िया : अच्छा तो पाँच सौ रुपये दीजिए, इससे कम में काम न होगा।

डाक्टर : (चेहरा उतर जाता है) इतना मेरे बूते के बाहर है। जान पड़ता है

उसके भाग्य मे मरना ही बदा है।

बुढिया तो जाने दीजिए। हमे अपनी जान भार थोडे ही है। हमने तो आपके मुलाहजे से इस काम का बीडा उठाया था। जाओ बुद्धू, सोओ।

डाक्टर बूढी माता, इतनी निर्दयता न करो, आदमी का काम आदमी से निकलता है।

बुद्धू नही बाबूजी, मैं हर तरीके से आपका काम करने को तैयार हूँ। उसने पाँच सौ कहा, आप कुछ कम कर दीजिए। हाँ, जोखम का ध्यान रखिएगा।

बुढिया तू जाके सोता क्यो नही? इन्हे रुपये प्यारे हैं तो मुझे अपनी जान प्यारी नही है? कल को लहू थूकने लगेगा तो बनाए न बनेगी। बाल बच्चो को किस पर छोडेगा? घर मे कुछ

डाक्टर (सकोच से) मैं दो सौ दे सकता हूँ।

बुढिया दो सौ? बाबूजी हम लोग गरीब हैं इसका मतलब यह तो नहीं कि हमारी जान सस्ती है। रहने दीजिए

डाक्टर चलो पचास और दे दूँगा। अब तो मान जाओ। (गिडगिडाता है।)

बुद्धू ठीक है।

डाक्टर (प्रसन्नता स) तो जल्दी चलो।

दृश्य पाँच

[डाक्टर का घर। अहिल्या और माँ जगिया के पास रुआँसी बैठी हैं। जगिया बेहोश मृतप्राय पडी है।]

डाक्टर (आँसू निकल पडते हैं) ओह!

बुद्धू (डाक्टर के आँसू देखकर) बाबूजी। अब मेरा किया कुछ नही हो सकता। यह दम तोड रही है।

डाक्टर (गिडगिडाकर) नही चौधरी, ईश्वर के नाम पर अपना मन्त्र चलाओ। इसकी जान बच गयी तो सदा के लिए मैं तुम्हारा गुलाम बना रहूँगा।

बुद्धू आप मुझ जानबूझकर जहर खाने को कहते हैं। मुझे मालूम न था कि मूठ के देवता इस बखत इतन गरम हैं। वह मेरे मन म बैठे कह

रहे हैं कि यदि तुमने हमारा शिकार छीना तो हम तुम्हें निगल जायेंगे।

डाक्टर : देवता को किसी तरह राजी कर लो।

बुद्धू : राजी करना बड़ा कठिन है। अब तो ये बिना भेंट के नहीं मानेंगे। कम-से-कम मुर्गा तो चढ़ाना ही पड़ेगा और भी बड़े-बड़े जतन करने होंगे।

डाक्टर : भेंट, मुर्गा?

बुद्धू : पाँच सौ से कम में काम नहीं होगा।

डाक्टर : पाँच सौ रुपये दे दूँ तो इसकी जान बचा दोगे?

बुद्धू : शर्त बदकर।

डाक्टर : (रुपये बुद्धू को देते हुए) लो, यह लो। पूरे पाँच सौ हैं।

बुद्धू : (प्रसन्नता से रुपये लेकर) जगिया का सिर अपनी गोद में रखकर छू, छू करने लगता है। सूरत भयानक बना लेता है, आँखें निकालता है) अब इसे बख्श दो।

जगिया : (आँखें खोलकर देखती है) हाँ!

बुद्धू : अब इसे छोड़ दो। इसके बदले मैं तुम्हें भेंट चढ़ाऊँगा।

जगिया : हे राम! (बैठ जाती है।)

बुद्धू : अच्छा, अब मैं चलता हूँ।

[रुपये लेकर चला जाता है। सब उसकी ओर देखते हैं फिर जगिया को देखते हैं।]

माँ : बात-की-बात में पाँच सौ रुपये मारकर ले गया।

डाक्टर : यह क्यों नहीं कहतीं कि मुरदे को जिला गया। क्या उसके प्राणों का मूल्य इतना भी नहीं?

माँ : देखो, आले में पाँच सौ रुपये हैं या नहीं?

डाक्टर : नहीं। उन रुपयों से हाथ मत लगाना। उन्हें वहीं रहने दो। जगिया के तीरथ के वास्ते थे, उसी में लगेंगे।

माँ : ये सब रुपये उसी के भाग के थे।

डाक्टर : उसके भाग के तो पाँच सौ ही थे, बाकी मेरे भाग के थे। उनकी बदौलत मुझे ऐसी शिक्षा मिली जो उम्रभर नहीं भूलूंगा। अब तुम आवश्यक कामों में मुझे मुट्ठी बन्द करते न पाओगी।

[सब उसकी ओर आश्चर्य से देखती हैं।]

[पर्दा गिरता है।]

वरमदेव



महेश सात्पधर

पात्र-परिचय

बुढ़िया वीरेन्द्र की माँ
रश्मि : वीरेन्द्र की पत्नी
दाई नर्स
भगत भूतो का सेवक
डाक्टर
वीरेन्द्र

दृश्य : एक

[बरामदे के आगे आँगन। बरामदे के पीछे एक कमरा है। कमरे का द्वार बरामदे मे खुलता है। द्वार के किवाड आधे खुले हैं। आँगन मे एक 'थान' सफेद चूने से पुता है। इस पर कुछ पुष्प बिखरे हैं। एक बुढ़िया बरामदे और आँगन के किनारे खडी है। बुढ़िया के सामने पच्चीस वर्षा माडर्न स्त्री है—यह सलवार-कुर्ता पहने है, सिर पर बालो का जूडा लगा है। यह दाई है।]

बुढ़िया (दाई को हँसिया दिखाकर) लो, बच्चे की नाल इससे काटना!
दाई (आश्चर्य से) क्या? इस पुराने जग-लगे हँसिए सेऽऽ? रहने दीजिये, मेरे पास स्ट्रेलाइज्ड ब्लेड है।

बुढ़िया : शकुन्तला ! ठीक है, तू पढ़-लिखकर दाई बन गई है और अंग्रेजी बोलने लगी है। अपने ब्लेड को अपने पास रख। इस घर में इसी हँसिये से नाल कटेगी। समझी ?

दाई : अम्माजी ! आप कैसी बातें कर रही हैं ? इस हँसिये से !

बुढ़िया : सात पुश्त से हमारे यहाँ इसी हँसिये से नाल कटती आ रही है। यह हँसिया बरमदेव महाराज का दिया हुआ है। जानती है ?

दाई : बरमदेव महाराज ! यह कौन हैं अम्माजी ?

बुढ़िया : 'बरमदेव महाराज' को नहीं जानती। अरे जिनका बड़ा थान चौराहे पर बड़े पीपल के नीचे है और छोटा (संकेत कर) वह देख सामने। अपरम्पार महिमा है महाराज की।

दाई : अम्माजी। आप बरमदेव महाराज को मानें इसमें क्या आपत्ति हो सकती है किन्तु इस हँसिये से नाल काटना मेरे वश से बाहर है। (बुढ़िया के हाथ से हंसिया लेकर) देखिये ! इस पर कितना जंगऽ बिल्कुल कालाऽऽ

बुढ़िया : तुझे काले-पीले से क्या लेना है ? अपना काम कर औरऽ

दाई : किन्तु जंग···

बुढ़िया : (रोष में) जंग, जंग, जंग। क्या करेगा जंग ? जहाँ बरमदेव महाराज का साया होता है वहाँ किसी का कुछ बाल बाँका नहीं होता।

दाई : लेकिन···!

बुढ़िया : (तपाक से) लेकिन-वेकिन छोड़ऽऽ, काटना हो तो काट वर्ना मैं अपनी पुरानी···

[वीरेन्द्र का प्रवेश। आयु ३० वर्ष]

वीरेन्द्र : क्या है अम्मा ?

बुढ़िया : यह इस हँसिये से नाल काटने को मना कर रही है।

वीरेन्द्र : ठीक तो है।

बुढ़िया : (वीरेन्द्र के पास आकर) ठीक है ? तू कह रहा है ? तेरा, तेरे बाप के बाप, दादा के बाप के नाल इसी हंसिये से कटे हैंऽऽ, तुझे पता नहीं है कि जिनके आशीर्वाद से तू जिया है यह उन्हीं बरमदेव महाराज का हँसिया है। यदि वे रूठ गये तो सब चौपट हो जायेगा। सब चौपट हो जायेगा बेटा सबऽऽ

वीरेन्द्र : अम्मा, तुम समझती क्यों नहीं ?

बुढ़िया : बेटा ! घरेलू कामों को तुम नहीं जानते।

वीरेन्द्र : (दाई से) आप अपना काम करें।

[दाई अन्दर जाने लगती है]

बुढ़िया सुनो! नाल इसी हँसिये से कटेगा वर्ना···

वीरेन्द्र (मनाते हुए) देखो, अम्मा! यह पढ़ी-लिखी ट्रेण्ड है। इन्हें डाक्टरों ने मना कर रखा है कि किसी पुराने चाकू, हँसिये का प्रयोग न करें। इनसे खतरा रहता है, ऽ मान जाओ।

बुढ़िया : अच्छा! लेकिन यह हँसिया नाल से छुआया जरूर जायेगाऽ

वीरेन्द्र हाँ, हाँ, छुआने में क्या हर्ज है (दाई को आँख का संकेत करते हुए) ले जाओ!

दाई . (हँसिया लेकर अन्दर जाती है) अच्छा!

बुढ़िया वीरेन्द्र! तू जा पंडित जी को बुला ला। मैं बरमदेव महाराज को प्रसाद चढ़ा दूँ।

वीरेन्द्र : पंडितजीऽ

बुढ़िया : पंडित भगवानदासऽ उनसे ग्रह-घड़ी मुहूर्त दिखवाने हैं, क्या करना क्या नहीं करना है, सब पूछना है।

[वीरेन्द्र जाता है। बुढ़िया बरामदे के कोने में जाकर एक कद्दू लेकर थान पर रखती है]

: यह लो महाराज! आपकी कृपा से पोता हुआ है। मैंने बोल दिया था कि यदि लड़का होगा तो कद्दू चढ़ाऊँगी। (सिर टेककर) क्षमा करना। तुम्हारा हँसियाऽऽ!

[वीरेन्द्र, पंडित का प्रवेश। पंडित लम्बा-चौड़ा, पचास वर्ष का है, सिर घुटा है, लम्बी चोटी लटक रही है। माथे पर चन्दन लगा है। बगल में 'पत्रा' है। धोती आधी पहने एवं आधी ओढ़े है। पैरों में चप्पलें हैं। बुढ़िया उसके पैर छूती है]

बुढ़िया : आपकी कृपा से लड़का। (स्टूल देकर) बैठिये, विराजिये!

[पंडित बैठता है]

: *ग्रह-नक्षत्र तो देखिये पंडितजी!*

पंडित : (बगल से पंचांग निकालता है। पंचांग से चश्मा निकालकर लगाता है फिर दृष्टि गड़ाकर पंचांग देखता है) बच्चे का जन्म किस समय हुआ?

बुढ़िया : यही कोई बीस मिनट पहले!

पंडित : (वीरेन्द्र की ओर देखकर) अब क्या बजा है?

वीरेन्द्र : तीन।

पंडित : तीनऽ अर्थात दो बजकर चालीस मिनटऽ (उंगलियों पर गिनते हुए) शनि, मंगल, चन्द्रमाऽ (पन्ना पलटकर) पंचकऽमूलऽ।
बुढ़िया : ग्रह कैसे हैं ?
पंडित : पंचक और सत्ताईस मूल हैं ?
वीरेन्द्र : पंचक और सत्ताईस मूल क्या होता है ?
बुढ़िया : तू नही समझेगाऽ हाँ, पडितजी अब ?
पंडित : पंचक तो आप जानती ही हैं कि जन्म और मृत्यु दोनों में अशुभ होता है और मूल वह भी सत्ताईसऽऽ
बुढ़िया : तो आप बताइये पंडित जी !
पंडित : (सिर खुजलाते हुए) पंचक की शान्ति के लिए वैसे तो पाँच तोले स्वर्ण, पांच चाँदी के सिक्के, पाँचों वस्त्र, पाँचों शस्त्र का दान, पंचदेव का पूजा का विधान होता है, किन्तु आप पाँच ग्राम स्वर्ण, चाँदी के सिक्कों के स्थान पर पाँच चाँदी के टुकड़े तथा दूसरी चीजें दान करा दीजिये।
बुढ़िया : और सत्ताईस मूल ?
पडित : (चश्मा सँभालते हुए) इसके लिए कम से कम सत्ताईस ब्राह्मणों को भोजन, ग्रहों का दान महाब्राह्मण को दीजिए और पूजा के लिए मैं हाजिर हूँ ही।
बुढ़िया : पूजा में क्या होगा पंडित जी ?
पंडित : पूजा में ज्यादा कुछ नही, बस पाँच नारियल, पाँच किलो सामग्री, पाँच मीटर श्वेत वस्त्र, सवा किलो देशी घी, ढाई किलो चीनी तथा सत्ताईस किलो सात प्रकार का अनाज और महँगाई को देखते हुए जो दक्षिणा उचित समझें।
वीरेन्द्र : फिर भी ?
पंडित : आप तो अपने ही हैं, एक-सौ-एक ही ले लूँगा।
वीरेन्द्र : पण्डित जी ? इतने रुपये !
बुढ़िया : तू मत बोल बेटा ! यह ग्रहों का मामला है, तू नही जानता। पण्डितजी ! मैं सारा प्रबन्ध करूँगी। फिर तो कुछ नहीं होगा ?
वीरेन्द्र : अम्मा ?
पंडित : (उठते हुए) मेरी दक्षिणा ?
वीरेन्द्र : (दो का नोट देते हुए) लीजिए।
पडित : क्या बात करते हो बड़े बाबूऽऽ, ग्यारह रुपये निकालो। पंचांग लेकर आपके घर तक आया हूँ। पाँच तो घर बैठे लेता हूँ।
बुढ़िया : दे बेटा ! ग्यारह दे। पंडितजी से तो रोजाना का काम रहता है।

वीरेन्द्र : (ग्यारह रुपये देते हुए) लीजिए।

[पण्डित रुपये लेकर जाता है। दाई बाहर आती है]

दाई : वीरेन्द्र बाबू। ए.टी. एस. लगवा दीजिए। (जाती है।)

वीरेन्द्र : अच्छा !

बुढ़िया : अरे हँसिया छुआया कि नहीं ?

वीरेन्द्र : छोड़ो भी अम्मा ! छुआ दिया होगा। इन डुकरिया पुरानो से क्या ?

बुढ़िया : डुकरिया पुरान। अभी छठी का प्रबन्ध करना है।

वीरेन्द्र : छठी ?

बुढ़िया : हाँ, बेटा छठी ! तुझे पता नहीं जब तेरी छठी हुई। मुझसे भूल हो गई थी ?

वीरेन्द्र : फिर क्या हुआ ?

बुढ़िया : बरमदेव महाराज रूठ गये थे। बड़ी मुश्किल से तेरी जान बची। इसलिए इस बार मैं कोई गलती न होने दूँगी। देख बेटा ! तू नास्तिकों-जैसी बातें मत किया कर। समझा।

दृश्य : दो

[वही घर। बुढ़िया बरामदे में बैठी है। फर्श पर सरसो के दाने बिखरे हैं। अन्दर से बच्चे के रोने की आवाज रुक-रुककर आती है। बुढ़िया हाथ जोड़कर अपना सिर धरती पर टेकती है।]

बुढ़िया : रक्षा करो बरमदेव महाराज ! जो गलती हो गई हो उसे क्षमा कर दो। वीरेन्द्र बच्चा है। आपके परताप को नहीं जानता, इसीलिए ऊल-जलूल बक देता है। (हाथ जोड़कर) रश्मि तो तुम्हें मानती है। वह तो सुबह-शाम तुम्हारी पूजा करती है। उसी का ख्याल करो। मैं तुम्हारी पूजा दिन निकलते ही चढ़ा दूंगी। बच्चे को बख्श दो।

रश्मि : (अन्दर से) अम्मा जी !

बुढ़िया : हाँ बहू ! क्यों ?

रश्मि : लड़का ऐंठ रहा है।

बुढ़िया : ऐंठ रहा है। ओह ! बरमदेव महाराज बिगड़ गए हैं। तू उनका ध्यान धर। मैं अभी छज्जू भगत को लिवाकर लाती हूँ। देख ! हँसिया बच्चे के पास रखा है कि नहीं !

रश्मि : हँसिया ?

बुढ़िया : क्यों, है नहीं क्या ?

रश्मि : इधर तो नहीं है।

बुढ़िया : (हड़बड़ाकर) क्या ? हँसिया वहाँ नहीं है ? कहाँ गया ?

रश्मि : रखा तो यहीं था।

बुढ़िया : कहीं वह दाई की बच्चीऽऽ, कहीं ऐसा तो नहीं कि मोहल्ले की कोई औरत उठा ले गई हो ? कोई अन्दर तो नहीं आया ?

रश्मि : अन्दर तो कोई नहीं आया !

बुढ़िया : हे भगवान ! हे बरमदेव महाराज !! अब क्या होगा ? हँसिया ? बहू ! रश्मि ! मैं भगत को लिवा लाऊँ ?

[जाती है। दो सेकिण्ड बाद वीरेन्द्र का प्रवेश]

वीरेन्द्र : रश्मि !

रश्मि : जी !

वीरेन्द्र : अम्मा कहाँ गईं ?

रश्मि : भगत जी को लिवाने ?

वीरेन्द्र : भगत जी ! कौन भगत जी ?

रश्मि : छज्जू भगत जी !

वीरेन्द्र : क्यों ?

रश्मि : बरमदेव महाराज रूठ गए हैं। देखो न लड़का कैसा ऐंठ रहा है ?

वीरेन्द्र : तो इसमे भगत क्या करेगा ?

रश्मि : देखो ! ऐसे मत कहो। बरमदेव महाराज तुम्हारी ऐसी बातों से ही रूठ गए हैं।

वीरेन्द्र : रश्मि ! तुम भी अम्मा की इस पोंगापंथी में सम्मिलित हो गईं ?

रश्मि : क्या कहते हो ? पोंगापंथी ? कौन नहीं मानता इस पोंगापन्थी को ? सेठ, साहूकार, नेता, अफ़सर, मिनिस्टर, कलक्टर, वकील, जज सब इस पोंगापंथी के आगे औंधे पड़े रहते हैं। किसलिए ? कुछ-न-कुछ तो इसमें है ही ? फिर तुम्हीं ऐसी बहकी-बहकी बातें क्यों करते हो ? देखो ! इसमें चाहे कुछ भी न हो, यदि मानने से हमारा बच्चा ठीक हो जाए तो बुरा क्या है ?

वीरेन्द्र : अब तुम्हें समझाए कौन ? मैं अभी डाक्टर को लिवाकर लाता हूँ।

[वीरेन्द्र का प्रस्थान। बुढ़िया, भगत का प्रवेश]

भगत : (नीचा, ढीला, कुर्ता-धोती पहने है। सिर पर कपड़ा बँधा है।

हाथ में माला है) ओह ! (नाक सिकोड़ता हुआ चारों ओर सूंघने की मुद्रा बनाता हुआ) अच्छा ऽ अच्छा तू ऽ है ऽ तू है ऽ !

बुढ़िया : (फर्श पर बैठकर) बरमदेव महाराज !

भगत : (द्वार की ओर मुंह कर सामने बैठकर)। छोड़ बच्चे को ऽ छोड़ ऽ छोड़।

बुढ़िया : कौन है भगत जी ?

भगत : वह पुराने पीपलवाली चुड़ैलऽ !

बुढ़िया : चुड़ैल ?

भगत : चल ऽ क्याऽ नही छोड़ेगीऽ !

बुढ़िया : (भगत के पैर पकड़कर) मेरे बच्चे को बचा लो भगत जी। तुम्हारा एहसान सात जन्म नही भूलूंगीऽ !

भगत : (दोनो हाथ फर्श पर टेककर सिर इधर से उधर घुमाने लगता है) नही छोड़ेगीऽ मैं तुझे आग में जला दूंगाऽऽ क्या कहा ? क्यो ?

बुढ़िया : क्या कहती है ?

भगत : बरमदेव महाराज के हुक्म से बच्चे पर है।

बुढ़िया : बरमदेव महाराज !

भगत : हाँ ! बरमदेव रूठ गए हैं। घर में किसी ने उनका अपमान किया है।

बुढ़िया : किया है, किया है मैं कब मना करती हूं। वीरेन्द्र ने किया है। वह तो कुछ-न-कुछ कहता ही रहता है। उसकी गलती की क्षमा मैं मांगती हूँ। भगत जी, आप बरमदेव महाराज को मना लीजिए।

भगत : मेरे वश से बाहर है।

बुढ़िया : (गिड़गिड़ाकर) मनाओ, भगत जी, मनाओ।

भगत : (धरती पर सिर रखकर हाथ जोड़ता है) बरमदेव महाराज ! बच्चे पर दया करो। इस चुड़ैल को वापस बुला लो। जो मांगोगे वही मिलेगाऽ !

बुढ़िया : जरूर मिलेगा !

भगत : क्षमा करो महाराज ! बोतल, मुर्गा, प्रसाद, वस्त्र सब मिलेगाऽऽ !

बुढ़िया : दिन निकलते ही।

भगत : (फुंकार मारकर, सिर घुमाते हुए) नहीऽ बिलकुल नही, अभीऽ इसी वक्तऽ !

बुढ़िया : इस समय बोतल कैसेऽ !

भगत : चिन्ता मत करोऽ, भगत सब प्रबन्ध कर लेगा।

बुढ़िया : (पर्स निकालकर) लो, पचास रुपये हैं।

भगत : (पर्स फेंकता है) बरमदेव महाराज का अपमान करती है। पचास रुपये के भूखे नहीं हैं महाराज।

बुढ़िया : (पैर पकड़कर) ऐसा मत करो। अभी लाती हूँ।

[अन्दर जाकर दूसरा पर्स लाती है]

: लीजिए। सौ हैं।

भगत : (पर्स उठाकर) हाँ। मगर हमारे बच्चे पर दूसरा हाथ नहीं रखेगा। समझी।

बुढ़िया : जी!

[भगत जाने लगता है।]

: भगत जी!

भगत : कहो क्या बात है?

बुढ़िया : बरमदेव महाराज का हँसिया बच्चे के कमरे से न जाने कहाँ गायब हो गया?

भगत : हँसिया? (नाक पकड़कर) हँसियाऽ! उत्तर दिशा के तीसरे मकान की एक औरत ले गई।

बुढ़िया : उत्तर दिशा—तीसरा मकानऽऽ!

[भगत का प्रस्थान]

: ठीक। पप्पू की माँ ले गईऽ।

[वीरेन्द्र और डाक्टर का प्रवेश]

वीरेन्द्र : अम्मा! डाक्टर साहब हैं। बच्चे को देखेंगे।

बुढ़िया : पागल हुआ है क्या? आज 'छठी' की रात है। अन्दर कमरे में कोई नहीं जा सकता! मैं स्वयं तक नहीं गई। बरमदेव सब ठीक कर देंगे।

डाक्टर : यह बरमदेव कौन हैं? क्या कोई वैद्य है?

वीरेन्द्र : अरे नहीं। अम्मा तो ऐसे ही अरमदेव बरमदेव पूजती रहती हैं।

बुढ़िया : चुप कर बेटा। बरमदेव ऐसी ही बातों से रुष्ट हैं। जैसे-तैसे मने हैं। अब रुष्ट हो गए तो अनिष्ट कर देंगे।

डाक्टर : मैं समझा नहीं?

वीरेन्द्र : आप समझेंगे भी नहीं। समझने की आवश्यकता भी नहीं। आप बच्चे को देख लीजिए।

[डाक्टर वीरेन्द्र के साथ अन्दर जाकर बाहर आता है।]

हाथ मे माला है) ओह ! (नाक सिकोडता हुआ चारो ओर सूंघने की मुद्रा बनाता हुआ) अच्छा ऽ अच्छा तू ऽ है ऽ तू है ऽ !

बुढिया : (फर्श पर बैठकर) बरमदेव महाराज !

भगत · (द्वार की ओर मुंह कर सामने बैठकर)। छोड बच्चे को ऽ छोड ऽ छोड।

बुढिया : कौन है भगत जी ?

भगत : वह पुराने पीपलवाली चुडैलऽ !

बुढ़िया : चुडैल ?

भगत : चल ऽ क्याऽ नही छोडेगीऽ ।

बुढिया : (भगत के पैर पकडकर) मेरे बच्चे को बचा लो भगत जी। तुम्हारा एहसान सात जन्म नही भूलूंगीऽ !

भगत (दोनो हाथ फर्श पर टवकर सिर इधर से उधर घुमाने लगता है) नही छोडेगीऽ मैं तुझे आग मे जला दूंगाऽऽ क्या कहा ? क्यो ?

बुढ़िया : क्या कहती है ?

भगत बरमदेव महाराज के हुक्म से बच्चे पर है।

बुढ़िया : बरमदेव महाराज !

भगत · हाँ। बरमदेव रूठ गए हैं। घर मे किसी ने उनका अपमान किया है।

बुढिया किया है, किया है मैं कब मना करती हूं। वीरेन्द्र ने किया है। वह तो कुछ-न-कुछ कहता ही रहता है। उसकी गलती की क्षमा मै मांगती हूँ। भगत जी, आप बरमदेव महाराज को मना लीजिए।

भगत मेरे वश से बाहर है।

बुढ़िया · (गिडगिडाकर) मनाओ, भगत जी, मनाओ।

भगत : (धरती पर सिर रखकर हाथ जोडता है) बरमदेव महाराज ! बच्चे पर दया करो। इस चुडैल को वापस बुला लो। जो मांगोगे वही मिलेगाऽ !

बुढ़िया : जरूर मिलेगा !

भगत : क्षमा करो महाराज ! बोतल, मुर्गा, प्रसाद, वस्त्र सब मिलेगाऽऽ !

बुढ़िया : दिन निकलते ही।

भगत : (फुकार मारकर, सिर घुमाते हुए) नहीऽ बिलकुल नही, अभीऽ इसी वक्तऽ !

बुढ़िया : इस समय बोतल कैसेऽ !

भगत : चिन्ता मत करोऽ, भगत सब प्रबन्ध कर लेगा।

बुढ़िया : (पर्स निकालकर) लो, पचास रुपये हैं।

भगत : (पर्स फेंकता है) बरमदेव महाराज का अपमान करती है। पचास रुपये के भूखे नहीं हैं महाराज।

बुढ़िया : (पैर पकड़कर) ऐसा मत करो। अभी लाती हूं।

[अन्दर जाकर दूसरा पर्स लाती है]

: लीजिए। सौ हैं।

भगत : (पर्स उठाकर) हां। मगर हमारे बच्चे पर दूसरा हाथ नहीं रखेगा। समझी।

बुढ़िया : जी!

[भगत जाने लगता है।]

: भगत जी!

भगत : कहो क्या बात है?

बुढ़िया : बरमदेव महाराज का हँसिया बच्चे के कमरे से न जाने कहाँ गायब हो गया?

भगत : हँसिया? (नाक पकड़कर) हँसियाऽ! उत्तर दिशा के तीसरे मकान की एक औरत ले गई।

बुढ़िया : उत्तर दिशा—तीसरा मकानऽऽ!

[भगत का प्रस्थान]

: ठीक। पप्पू की माँ ले गईऽ।

[वीरेन्द्र और डाक्टर का प्रवेश]

वीरेन्द्र : अम्मा! डाक्टर साहब हैं। बच्चे को देखेंगे।

बुढ़िया : पागल हुआ है क्या? आज 'छठी' की रात है। अन्दर कमरे में कोई नहीं जा सकता! मैं स्वयं तक नहीं गई। बरमदेव सब ठीक कर देंगे।

डाक्टर : यह बरमदेव कौन हैं? क्या कोई वैद्य है?

वीरेन्द्र : अरे नहीं। अम्मा तो ऐसे ही बरमदेवबरमदेव पूजती रहती हैं।

बुढ़िया : चुप कर बेटा। बरमदेव ऐसी ही बातों से रुष्ट हैं। जैसे-तैसे मने हैं। अब रुष्ट हो गए तो अनिष्ट कर देंगे।

डाक्टर : मैं समझा नहीं?

वीरेन्द्र : आप समझेंगे भी नहीं। समझने की आवश्यकता भी नहीं। आप बच्चे को देख लीजिए।

[डाक्टर वीरेन्द्र के साथ अन्दर जाकर बाहर आता है।]

डाक्टर टिटनैसऽ !
वीरेन्द्र टिटनैस ? (चेहरा उतर जाता है) ।
डाक्टर ए. टी. एस. नही लगा ?
बुढ़िया : पप्पू की माँ भी डायन है, हँसियाऽ !
वीरेन्द्र पप्पू की माँ ने क्या किया ? तुम्हारा हँसिया तो अन्दर अलमारी मे है ।
बुढ़िया (आश्चर्य से) हँसिया है ?
वीरेन्द्र : हाँ । मैं रख गया था ।
डाक्टर : हँसिया, मैं समझा नहीऽ !
वीरेन्द्र : डाक्टर साहब, अब क्या समझाऊँ ? टिटनैस की जड यह हँसिया ही तो है ।
डाक्टर : क्या इसी से…
बुढ़िया कहाँ काटने दिया इससे ? इससे कटता तो यह मुसीबत होती ही क्यो ?
डाक्टर . अजीब बात है ?
बुढ़िया इसीलिए तो बरमदेव महाराज रुष्ट हैं ।
वीरेन्द्र अब ? (डाक्टर को देखता है) ।
डाक्टर : तुरन्त शहर ले जाइए । देर करना खतरे से खाली नही । आप सवारी का प्रबन्ध करें । मैं भी चलूँगा । (जाता है)
वीरेन्द्र : अम्मा ! वह पर्स देना जिसमे रुपये रखे हैं ।
बुढ़िया : पर्स ?
वीरेन्द्र : हाँ पर्स ! क्यो ?
बुढ़िया . (चुप)
रश्मि : वह…
वीरेन्द्र : हाँ, हाँ ! देर मत करो ।
रश्मि : जी—जी, भगतऽ !
वीरेन्द्र : क्याऽ भगतऽऽ अम्माऽऽ !
बुढ़िया : वीरेन्द्र बेटा ! तू घबडा मत । बरमदेव महाराज सब ठीक कर देंगे । तू उनके थान पर एक बार माथा तो टेक ।
वीरेन्द्र : 'टिटनैस' को डाक्टर और दवाएँ ठीक करती हैं कि बरमऽ !
बुढ़िया : बेटा ! मान जा । मैं तेरे हाथ जोडती हूँ । बरमदेव महाराज को कुछ मत कहऽ (थान के पास जाकर माथा टककर) महाराज इसे क्षमा कर दो । तुम्हारा ही बच्चा है । (वीरेन्द्र जाता है) ।

[पर्दा गिरता है]

प्यालियाँ टूटती हैं

□

मोहन राकेश

पात्र-परिचय

[माधुरी और मीरा दोनों बहनें सुन्दर हैं, दोनों की वेशभूषा भी सुरुचिपूर्ण है। माधुरी बड़ी होती हुई भी बड़ी नहीं लगती, बल्कि बातचीत और व्यवहार में मीरा की अपेक्षा ज्यादा नये रंग में रची हुई प्रतीत होती है। फिर भी उसमें आत्मविश्वास कम है और उसके चेहरे से ही प्रतीत होता है कि उसमें हीनता की भावना है।

पम्मी तेरह-चौदह बरस की लड़की है। उसका बात करने का ढंग ऐसा है, जैसे लाड़ कर रही हो। बाल कटे हैं और जाँघों तक फ्राक पहनती है।

दीवानचन्द बुजुर्ग आदमी है। चेहरे से उसकी उम्र का अन्दाजा नहीं होता, जो पचास से पैंसठ के बीच कुछ भी हो सकती है। दाढ़ी के सब बाल सफ़ेद हैं और लगता है उसने कई महीने से हजामत नहीं बनवायी। कपड़े भी काफ़ी मैले हैं। बातें करते हुए उसकी आँखें बार-बार मुंद जाती हैं।

भोलानाथ दुनियादार आदमी है और बड़ी उम्र के बावजूद चुस्त दिखायी देता है। मूंछ गहरी काली हैं और साफ़ पता चलता है कि उन्हें खिजाब से रंगा गया है। वह उन आदमियों में है, जो अपने को काफ़ी महत्त्वपूर्ण समझते हैं और दूसरों से व्यंग्यपूर्ण ढंग से बात करते हैं।

महिपत में वे सब विशेषताएँ हैं, जो एक अमीर घर के नौकर में आम तौर पर पायी जाती हैं।]

स्थान : एक नये बने हुए बँगले का पीछे की तरफ का बरामदा, जिसके आगे छोटा-सा लॉन है। बरामदे मे दो बड़े-बडे दरवाजे हैं, जो अन्दर कमरो मे खुलते हैं। जब कोई भी दरवाजा खुलता है, तो आगे नीले रग का फूदार पर्दा दिखायी देता है। दरवाजों और ऊपर के रोशनदानो की बनावट बिलकुल आधुनिक किस्म की है।

बरामदे से लॉन मे आने के लिए एक पैडी नीचे उतरना पडता है। लॉन मे दोनो ओर गमलो की पक्तियाँ तरतीबवार रखी हैं, जिनमे डेलिया, गुलाब, फ्लाक्स और पापी आदि फूल लगे हैं। बरामदे के साथ-साथ भी गमलो की पक्ति लगी है।

एक छतरी लॉन के बीच मे लगी है, जिसके इर्द-गिर्द छ-सात बेत की आराम-कुर्सिया पडी हैं। साथ दो गोल तिपाइयाँ हैं, जिन पर सुन्दर मेजपोश बिछे हैं। दायी ओर सफेद कपडे से ढकी हुई बडी मेज है, जिस पर चाय का सामान लगाया जा रहा है।

समय : अप्रैल के महीने मे एक दिन बाद दोपहर।

[पर्दा उठने पर माधुरी चाय की मेज के पास व्यस्त दिखायी देती है। मीरा छतरी के पास कुर्सी पर बैठी एक फिल्मी पत्रिका के पन्ने उलट रही है। प्यालियो को ठीक से रखने की चेष्टा मे एक प्याली माधुरी के हाथ से गिरकर टूट जाती है।]

माधुरी : लो, एक और प्याली टूट गयी।

[मीरा बिना सिर उठाये पत्रिका के पन्ने पलटती रहती है।]

मीरा : तो क्या हुआ? प्यालियाँ तो टूटती रहती हैं।

माधुरी : जब एक-के-बाद एक इस तरह प्यालियाँ टूटती हैं तो जरूर कोई-न-कोई अनिष्ट होता है।

[मीरा पत्रिका तिपाई पर फेंककर माधुरी की ओर देखती है।]

मीरा : प्याली टूट गयी, यही अनिष्ट है। बाकी तो मन का वहम होता है।

[माधुरी गिरी हुई प्याली का एक टुकड़ा उठा लेती है।]

माधुरी : साठ रुपये का सेट आया था, तबाह हो गया।

[मीरा हल्की-सी जम्हाई लेती है।]

मीरा : पुरानी चीज़ तबाह हो, तभी तो नयी आती है। नया आ जायेगा।

माधुरी : ये टुकड़े उठवा दूँ। (आवाज़ देकर) महिपत!

[दायीं ओर का दरवाज़ा खुलता है और महिपत जल्दी में आता है।]

महिपत : जी!

[बरामदे से उतरते हुए ठोकर खाकर गिरने लगता है, मगर किसी तरह सँभल जाता है।]

माधुरी : सँभलकर नहीं चला जाता? अभी मुँह के बल गिर पड़ता। ये प्याली के टुकड़े यहाँ से साफ़ कर।

[हाथ का टुकड़ा फेंक देती है।]

महिपत : एक और प्याली टूट गयी?

माधुरी : हाँ।

महिपत : आज आपके हाथ से बहुत प्यालियाँ टूट रही हैं।

माधुरी : तुमसे टुकड़े उठाने के लिए कहा है। बात करने को किसने कहा है?

महिपत : जी, उठा तो रहा हूँ।

माधुरी : अच्छी तरह देख लेना, कोई टुकड़ा रह न जाय।

[महिपत टुकड़े बीनकर खड़ा होता है]

: ये टुकड़े फेंककर कपड़े बदल ले। अभी मेहमानों के आने का वक़्त हो रहा है!

महिपत : जी!

[चला जाता है। माधुरी मीरा के निकट आ जाती है।]

माधुरी मीरा, आज मेरा मन कुछ उखड़ा-उखड़ा-सा है। सिर भी भारी है। न जाने क्यो ?

मीरा : थोडी देर कुर्सी पर बैठकर आराम कर लो। ठीक हो जाओगी।

[माधुरी कुर्सी पर बैठ जाती है।]

माधुरी . मिसेज़ मेहता को चाय के लिए कहकर मैंने तो मुसीबत मोल ले ली है।

[मीरा पत्रिका पर झुककर फिर पन्ने पलटने लगती है।]

मीरा : क्यो ? इसमें घबराने की ऐसी क्या बात है ? तुम्हारे यहाँ तो रोज़ किसी-न-किसी की चाय रहती है।

माधुरी : पर तुम मिसेज़ मेहता को जानती नहीं हो। बहुत नखरे वाली औरत है।

मीरा : नखरे वाली है तो क्या हुआ ? तुम्हारी चाय भी तो कम नखरे की नही होती ''

माधुरी : फिर भी उस औरत का कुछ नही कहा जा सकता। तुम्हारे सामने मुस्कराती रहेगी और हर चीज़ देखकर 'हऊ नाइस', 'हऊ ब्यूटीफुल' कहती रहेगी। बाद मे दूसरे लोगो के सामने तरह-तरह के मज़ाक उडाएगी।

मीरा : तुम्हे तो खामखाह का कॉम्प्लेक्स है, दीदी। अपनी अच्छी-से-अच्छी चीज़ पर भी तुम्हे भरोसा नही होता। तुम्हारी वह किस चीज़ का मज़ाक उडाएगी ?

माधुरी . यह मैं नही जानती। मैंने दोनो सेट महिपत से अच्छी तरह स्टीम कराये हैं। सवेरे लॉन की घास भी कटवायी थी। टूटे हुए गमले उठवा दिये हैं। फिर भी उसकी नज़र कुछ-न-कुछ ढूँढ ही निकालती है। अपने रहन-सहन का उसे बहुत गुमान है।

[मीरा पत्रिका हाथ मे लिये हुए पीछे टेक लगा लेती है।]

मीरा . होने दो। तुम्हारा रहन-सहन किसी से कम नही है। तुम्हारे जैसा लॉन किसी का क्या होगा ? मेरा ही दिल देखकर ईर्ष्या से भर जाता है।

[जम्हाई लेकर गमलो की तरफ़ देखती है और सहसा उठ खड़ी होती है।]

: यह तुम्हारी पाम्ी बहुत खूबसूरत है। अभी मँगवायी है ?

[पास जाकर पापी के फूलों को सहलाने लगती है।]

माधुरी : यह विलायती पापी है। मिसेज़ राबिन्सन के बाग से आयी है।

मीरा : इतनी खूबसूरत पापी मैंने आज तक नहीं देखी।

[माधुरी उठकर उसके निकट चली जाती है।]

माधुरी : मेरे यहाँ तो इसके दो ही पौधे हैं। मिसेज़ राबिन्सन के यहाँ पूरी-की-पूरी रो इस पापी की है।

मीरा : हाँ, सुना है, मिसेज़ राबिन्सन को फूलों का बहुत शौक है।

माधुरी : उसने बाक़ायदा अपनी नर्सरी बना रखी है। जानती हो, उसकी नर्सरी में कितनी तरह का गुलाब है? कम-से-कम पचास तरह का। बिल्कुल काला और बिल्कुल सफ़ेद गुलाब तुमने देखा है? बहुत खूबसूरत होता है। मिसेज़ राबिन्सन सैंकड़ो रुपया फूलों के बीज मँगवाने पर खर्च करती हैं।

मीरा : यही तो बेचारी की ज़िन्दगी है। फूल लगा ले या मिशन को दान दे दे।

माधुरी : टेस्ट की भी बात है। घर खूबसूरत हो तो इन्सान को अपना-आपा खूबसूरत लगता है। नहीं?

[फिर आकर कुर्सी पर बैठ जाती है। मीरा गमलों के पास टहलती रहती है।]

मीरा : तुम्हारा घर किसी से कम खूबसूरत नहीं है। मिसेज़ राबिन्सन के यहाँ केवल फूल-ही-फूल हैं। तुम्हारे जैसे पर्दे और कार्पेट तो नहीं हैं।

माधुरी : लेकिन फिर भी मुझे अपना घर अधूरा-सा लगता है।

मीरा : तुम जैसी पर्फ़ेक्शन चाहती हो, वैसी पर्फ़ेक्शन दुनिया में कहीं मिलती है, जीजी?

माधुरी : मैं खुद नहीं जानती कि मैं क्या चाहती हूँ। लेकिन यह सब मुझे अधूरा-अधूरा-सा ज़रूर लगता है।

मीरा : यह केवल कॉम्प्लेक्स है और कुछ नहीं। मिस्टर और मिसेज़ मेहता को किस समय आना है? साढ़े-पाँच बजे न?

माधुरी : और पाँच दस हो गए हैं।

मीरा : अभी पाँच दस ही तो हुए हैं। तुम इतना नर्वस हो जाती हो कि बस···।

माधुरी : नर्वस? हाँ मीरा, मैं इस समय ज़रूर नर्वस हूँ। आज सुबह से मेरे हाथ से प्यालियाँ टूट रही हैं।

मीरा : तो क्या हुआ? हर आदमी के हाथ से प्यालियाँ टूटती हैं।

माधुरी . हुआ कुछ नहीं···मगर···कुछ हो सकता है।

मीरा क्या हो सकता है?

माधुरी : क्या पता? कुछ भी हो सकता है।

[बायीं ओर का दरवाजा खुलता है और पम्मी बरामदे से उछलकर उनके पास आ जाती है।]

पम्मी ममी, वे उधर आए हैं, वे···।

[माधुरी सहसा उठकर खड़ी हो जाती है।]

माधुरी : मिस्टर और मिसेज मेहता आ गए?

पम्मी नहीं ममी, मिस्टर और मिसेज मेहता नहीं आए! वे आए हैं··· स्यालकोट वाले मौसाजी।

[माधुरी परेशान हो उठती है।]

माधुरी : दीवानचन्द?···मीरा, मैं तुमसे क्या कह रही थी?

मीरा : क्या?

माधुरी कि मेरे हाथ से प्यालियाँ टूट रही हैं तो जरूर कुछ-न-कुछ होगा।

मीरा जीजा दीवानचन्द के आने में ऐसी कौन-सी बात, दीदी? कभी-कभार वे हमारे यहाँ भी इसी तरह चक्कर लगा जाते हैं।

माधुरी : वह तो ठीक है। लेकिन ये जब भी आते हैं तो मुझे न जाने कैसा-कैसा लगता है।

मीरा कैसा लगता है?

माधुरी : न जाने कैसा? इन्हें देखकर मुझे एक घिनौनी-सी सिहरन होती है।

मीरा तो उसमें क्या है? इनकी चाल-ढाल और पहरावा ही ऐसा है।

माधुरी ये जैसे उन गुजरे हुए दिनों की छाया हैं।·· आज मिस्टर और मिसेज मेहता की पार्टी है, और ये बेवक्त यहाँ पहुँचे हैं। वे लोग इन्हें यहाँ देख लें तो, क्या सोचेंगे?

मीरा . तुम इन्हें उनके आने से पहले ही विदा कर दो।

माधुरी . इन्हें विदा होने-होने में एक घण्टा लगता है। अभी तो आए ही हैं। पम्मी, कपड़े-अपड़े कुछ ठीक पहने हुए हैं या उसी तरह···?

पम्मी : वही कपड़े जो हमेशा पहनकर आते हैं। मैला चीकट तहमद, ऊपर वैसी ही कमीज और गले में लाल अँगोछा।

[माधुरी के चेहरे पर परेशानी की रेखाएँ गहरी हो जाती हैं।]

माधुरी : बताओ मैं क्या करूँ? राधा दीदी के नाते इन्हें बर्दाश्त करना पड़ता है, लेकिन ये हैं कि बस...।

पम्मी : आज माथे पर लाल गेरू का तिलक भी लगाए हैं। कहते हैं, चिंतपुरनी होकर आ रहे हैं।

माधुरी : ड्राइंग रूम में बैठे हैं।

पम्मी : नये सोफ़े पर पालथी मारकर बैठे हैं।

माधुरी : तुझे कुछ दिया-विया तो नहीं ?

पम्मी : मुझे पास बुला रहे थे, लेकिन मैं गई नहीं। मुझे उनके कपड़ों से बदबू आती है।

माधुरी : बड़ी मुसीबत है। एक बार इनकी बातों का सिलसिला आरम्भ हो जाए, तो फिर समाप्त ही नहीं होता। हमेशा वही बातें—बीबो, स्यालकोट के दिन होते तो यह होता, वह होता। दीवानचन्द आज भी शाह दीवानचन्द होता। दीवानचन्द की हवेली खड़ी होती।...दीदी चली गई लड़की पाकिस्तान में रह गई, मगर ये मैले-चीकट शाह यहाँ पहुँच गए।

पम्मी : ममी, ऐसे आदमी को घर में नहीं आने देना चाहिए। देखो, कितना बुरा लगता है।

माधुरी : अब यह ज़बरदस्ती का रिश्ता है। किसी दिन दो-चार गुलाब जामुन ले आएँगे। किसी दिन खट्टे चनों का कुल्लड़ भर लाएँगे और जाते हुए एक मैला पुराना रुपये का नोट पम्मी के हाथ में दे जाएँगे। चार पैसे की चीज़ लाएँगे और मेरे कार्पेट अपने जूते से खराब कर जाएँगे। पम्मी, आज फिर कोई स्यालकोट का किस्सा सुना रहे हैं ?

पम्मी : नहीं, आज पापा को चिंतपुरनी की यात्रा का हाल सुना रहे हैं।

माधुरी : इनकी चिंतपुरनी की यात्रा हो गई, और मिसेज़ मेहता दस जगह मेरा मज़ाक उड़ाती फिरेंगी। कितने इन्सेंसिटिव लोग होते हैं!...मीरा, तुम वहाँ फूल सूंघ रही हो, मुझे बताओ, मैं क्या करूँ?

मीरा : दीदी, मेरा इस पापी को देख-देखकर दिल नहीं भरता। शरारती बच्चों की तरह मुंह खोलकर हँसते हुए ये फूल सचमुच बेहद खूबसूरत हैं।

माधुरी : मगर मुझे बताओ, मैं इस समय क्या करूँ?

मीरा : पम्मी से कहो, अपने पापा के कान में जाकर कह दे कि उन्हें जल्दी से विदा कर दें।

माधुरी : जैसे वह इतने से ही विदा हो जाएँगे।

[पम्मी उसका हाथ दबाकर आँख से संकेत करती है।]

पम्मी मम्मी ! वे इधर ही आ रहे हैं।

[दूर से ही दीवानचन्द के बोलने की आवाज सुनाई देने लगती है। बायीं ओर का दरवाजा खुलता है और दीवानचन्द तथा भोलानाथ निकलकर बरामदे में आ जाते हैं। भोलानाथ के चेहरे का भाव ऐसा है जैसे व्यर्थ की मुसीबत ढो रहे हों, यद्यपि होंठों पर हल्की-सी मुस्कराहट भी है। दोनों बरामदे से लॉन में आ जाते हैं।]

दीवानचन्द : उससे आगे तीन कोस की यात्रा है। मगर सच पूछो तो चलते हुए पता ही नहीं चलता कि रास्ता तीन कोस है कि एक कोस है, कि है ही नहीं। प्रेम से कीर्तन करते और माता की जय बुलाते हुए पहुँच गये—'जय माता की'।

माधुरी आइए, जीजाजी।

मीरा : नमस्ते, जीजाजी।

दीवानचन्द · अच्छा, मीरा बीबी भी यहाँ है? वाह-वाह !

[पम्मी मुँह बनाए हुए अन्दर चली जाती है।]

. बैठो, माधुरी बीबी। बैठो, बैठो।···मैंने सोचा कि बहुत दिन हो गए पम्मी से मिले हुए, जाकर मिल आऊँ। पम्मी बेटी !··· अरे, अन्दर भाग गई?···पम्मी !

माधुरी : आप बैठिए, जीजाजी। पम्मी अभी आ जाएगी।···अ···आप चाय-वाय पीएँगे?

भोलानाथ : आए हैं तो पिएँगे ही। कभी-कभार तो बेचारे आते हैं।

मीरा : जीजाजी का शरीर अब पहले से बहुत बिरध हो गया है। इन्हें आने-जाने में काफी कष्ट होता होगा।

भोलानाथ : ये चिंतपुरनी की पैदल यात्रा कर आए हैं और तुम कहती हो, इन्हें आने-जाने में कष्ट होता होगा। मैं तो समझता हूँ कि इनकी सेहत पहले से अच्छी हो गई है।

दीवानचन्द : सेहत-वेहत अब क्या अच्छी होगी, बाबू भोलानाथ? लेकिन मैं अब इसकी परवाह नहीं करता। न जाने कितनी घड़ी की माया

है ? रह गई तो आठ-दस साल रह गई, न रही तो इस घड़ी का भी भरोसा नहीं।

भोलानाथ : अभी आपकी आयु लम्बी है। बीस-पच्चीस साल तो कम-से-कम समझिए। मुझे तो आप अब स्यालकोट से ज्यादा तंदुरुस्त दिखाई देते हैं।

[माधुरी और परेशान हो जाती है।]

माधुरी : आप स्यालकोट की बातें क्यों उठा रहे हैं ?

भोलानाथ : ये आए हैं तो क्या स्यालकोट की बातें नहीं होंगी ? (हँसता है।)

माधुरी : छोड़िए भी, मेरे दिल को दु:ख होता है।···इनके दिल को भी दु:ख होता है।

दीवानचन्द : दु:ख तो होता ही है, बीबी। मगर बैठ जाएँ, सब लोग खड़े ही क्यों हैं ?

[एक कुर्सी पर बैठ जाता है। और सब भी एक-एक करके बैठते हैं।]

: स्यालकोट की बातें स्यालकोट के साथ ही रह गईं। कहाँ दीवानचन्द की भरी-भरी हवेली और कहाँ ये आज के दि···!

मीरा : उन दिनों की बातों को छोड़िए, उन्हें सोचने में अब क्या रखा है ?

[दीवानचन्द ठण्डी साँस लेता है।]

दीवानचन्द : छोड़ दिया, मीरा बीबी। अब तो बस उन दिनों की बातें-ही-बातें हैं। अब न हाथ-पैर चलते हैं और न आँखों से ठीक सूझता है। कभी हाथ आग में जला लेता हूँ, कभी उँगली चाकू से काट लेता हूँ।

मीरा : आप सौ-सौ काम-धन्धे भी तो करते रहते हैं। अब तो आपको सब काम-धन्धे छोड़कर घर पर आराम करना चाहिए।

दीवानचन्द : काम-धन्धा न करूँ बीबी, तो खाऊँगा कहाँ से ? पेट को भी तो पालना है। कभी शाह दीवानचन्द सोने का था, आज मिट्टी का भी नहीं।

[अँगोछे से माथे और गले का पसीना पोंछता है।]

मीरा : सवा पाँच हो चुके हैं।

माधुरी : आइ एम फ़ीलिंग अपसेट।

मीरा : डोन्ट बी नर्वस।

दीवानचन्द मेरे दिल को यही देखकर ठण्डक पडती है कि तुम लोग, मेरे बच्चे, अब अच्छी तरह से हो। यहाँ आकर भोलानाथ ने नये सिरे से कुछ बनाया-किया है। तुम लोगो ने सिर ढकने के लिए यह छत खडी कर ली, मेरे लिए यही सोना है।

माधुरी जीजाजी, जो कुछ हो रहा है, आपके आशीर्वाद से ही हो रहा है। इन्होंने किसी तरह अपनी जान मारकर यह छोटा-सा घर बना लिया है।

दीवानचन्द यही बडी बात है। देखकर मेरा कलेजा ठण्डा होता है।·· मीरा बीबी, लोग तो उधर से आकर यहाँ दर-बदर हो गए, भीख तक माँगने लगे। मैं हाथ की मेहनत करके पेट पाल लेता हूँ, यही क्या कम है? इसी मे समझ लो अपनी इज्जत बनी हुई है।

मीरा आप अपने साथ वहाँ से कुछ नही लाए थे?

दीवानचन्द जो कुछ ला सकता था, ले आया था—बस, ये चार-पाँच जानें।···

माधुरी : मीरा, तुम भी जान-बूझकर पुराने किस्से छेड़ रही हो।

मीरा मैं तो वैसे ही पूछ रही थी। सॉरी।

दीवानचन्द थोडा-सा रुपया-पैसा जिस गाँठ मे लाया था, वह गाँठ-की-गाँठ मैंने लाहौर के अड्डे पर हवाई जहाज वालो को दे दी। मैंने कहा कि मेरी ये चार-पाँच जानें हैं, इन्हे किसी तरह दिल्ली पहुँचा दो। पम्मी तब मेरी मुक्ता जितनी ही बडी थी। निक्कू शायद आठ-दस साल का होगा। ये लोग यहाँ पहुँच गए, तो मैंने समझा कि मेरा सब कुछ पहुँच गया।

मीरा इट्स गैटिंग लेट।

माधुरी व्हाट कैन आई डू एबाउट इट?

[भोलानाथ कन्धे हिलाकर उठ खडा होता है।]

भोलानाथ मैं उधर जाकर देखता हूँ। शायद वे लोग आ रहे हो।

माधुरी आ जाएँ तो उन्हे ड्राइंग रूम मे ही बिठाइएगा।

[भोलानाथ चला जाता है।]

दीवानचन्द दीवानचन्द पहले सूम था। सब लोग कहते थे, दीवानचन्द सूम है। मगर उन दिनो की मारकाट ने इसे भी नसीहत दे दी। मगर नसीहत आई कब? जब घर-परिवार उजड गया, उसके बाद। मैंने कहा दीवानचन्द पहले तूने बुराई कमाई थी, सो तुझे बुराई

मिली। अब कुछ नेकी दो। जैसे तेरे लिए शुक्ला था बिलकुल वैसे ही निक्कू और पम्मी हैं। पम्मी और शुक्ला तो बिलकुल एक-सी लगती थीं। क्यों माधुरी बीबी ?

माधुरी : हाँ-आँ…एक-सी ही लगती थी।

दीवानचन्द : आज भी इसे देख लेता हूँ तो मन खिल उठता है।…अपनी शुक्ला ही सामने आ जाती है।

[ठण्डी सांस लेता है। माधुरी चेष्टा करके जम्हाई रोकती है।]

माधुरी : हम तो अक्सर उसकी बात किया करते हैं। कितनी प्यारी बच्ची थी !

मीरा : न जाने कौन मरदूद उठाकर ले गये। अब जाने बेचारी कहाँ है, कैसी है ! जीजी, सी द टाइम !

माधुरी : फ़ाइव एटीन।…महिपत !

[महिपत अन्दर से आवाज़ देता है।]

महिपत : आया जी !

[दायें दरवाज़े से बाहर आता है।]

माधुरी : चाय का पानी खूब गर्म है न ?

महिपत : जी !

माधुरी : और सब सामान ठीक है ?

महिपत : जी !

माधुरी : टीकोज़ी नयी वाली निकालना, जो ये कश्मीर से लाये थे ?

महिपत : अच्छा जी !

[जाने लगता है।]

मीरा : और सुन !

[महिपत रुककर उसकी ओर देखता है।]

महिपत : जी !

मीरा : जल्दी से चाय की एक प्याली बना ला। एकदम जल्दी।

महिपत : एक प्याली ?

मीरा : हाँ-हाँ, एक प्याली। चीनी ज़्यादा हो।

महिपत : जी !

[कंधे हिलाकर चला जाता है। माधुरी कुर्सी से उठ खड़ी होती है।]

माधुरी : तुम जीजा जी को चाय पिलाओ, मीरा। मैं उतनी देर में अन्दर जाकर देख लूँ कि···।

दीवानचन्द : क्या बात है, माधुरी बीबी? कुछ उतावली में दिखाई देती हो?

माधुरी : जी हाँ···हाँ···कुछ उतावली ही है। इनके एक दोस्त हैं, आज हमने उन्हें चाय पर बुलाया है। इसीलिए हम ज़रा···।

दीवानचन्द : ठीक है। तुम लोग उनकी चाय का इन्तज़ाम करो। मेरे लिए चाय की प्याली रहने दो। हुआ तो बाद में पी लूँगा। दीवानचन्द का अपना घर है। तुम लोग चाय पी-पिलाकर खाली हो जाओ, तो···।

[माधुरी मुश्किल से अपनी झुंझलाहट दबाती है।]

माधुरी : नहीं जीजा जी, आप क्या उतनी देर बैठे रहेंगे? हमें अ···उन लोगों को जाने यहाँ कितनी देर लग जाय। आप चाय की प्याली पी लीजिये···।

[भोलानाथ अन्दर से आता है। माधुरी एकदम घबरा जाती है।]

: वे लोग आ गये क्या?

भोलानाथ : अभी नहीं आये।···इन्हें अभी चाय नहीं पिलायी?

माधुरी : इनकी चाय आ रही है।

दीवानचन्द : मैं आज तुम लोगों के पास एक खास बात के लिए आया था। तुम लोग जल्दी में हो, इसलिए कहता था कि तुम लोग खाली हो जाओ तो ही···।

[भोलानाथ के माथे पर बल पड़ जाते हैं।]

भोलानाथ : आपको जो कहना है अभी कह दीजिए। बाद में आज वक्त नहीं मिलेगा।

[दीवानचन्द हक्का-बक्का-सा उसकी ओर, फिर मीरा और माधुरी की ओर देखता है। फिर किसी तरह बात कहने के लिए तैयार होता है।]

दीवानचन्द : बात यह है, बाबू भोलानाथ, कि देवी ने इस बार मुझ पर बहुत कृपा की है।

भोलानाथ : यह तो सचमुच खुशी की बात है।...मगर आप हमारे लिए कुछ कह रहे थे।

दीवानचन्द : देवी ने मेरी खोयी हुई शुक्ला मुझे मिला दी है।

भोलानाथ : शुक्ला ?...यह कैसे हो सकता है ? शुक्ला तो पाकिस्तान में रह गयी थी।

माधुरी : चिंतपुरनी में वह कैसे पहुँच गई ?

मीरा : और दस साल बाद आपने उसे पहचान लिया ? तब तो वह सिर्फ़ चार साल की थी...।

दीवानचन्द : मेरा मतलब उससे नहीं, एक और लड़की से है। मेरी शुक्ला पम्मी जैसी लगती थी न ? यह भी बिलकुल पम्मी जैसी ही लगती है।

माधुरी : तो आप ग़ैर लड़की की बात कर रहे हैं ?

दीवानचन्द : नहीं, माधुरी बीबी, मुझे वह ग़ैर नहीं लगती। सूरत-शक्ल से, चाल-ढाल से मुझे वह बिलकुल अपनी शुक्ला और पम्मी जैसी ही नज़र आती है।

मीरा : बेचारी पम्मी को रहने दीजिए। उसका नाम क्यों ख़ामख़ाह साथ लेते हैं ?

दीवानचन्द : पम्मी भी तो मेरी अपनी बच्ची है, मीरा बीबी।...मैं तो तुम्हें भी अपनी बच्ची की तरह मानता हूँ, चाहे तुम कितनी ही बड़ी हो गई हो।

[हल्की बुजुर्गाना हँसी हँसता है।]

: वहाँ देवी के मन्दिर के बाहर मैंने इस लड़की को देखा। यह वहाँ यात्रियों से पैसा-पैसा माँग रही थी।

भोलानाथ : तो किसी भीख माँगने वाली लड़की की बात है। इस तरह की सैंकड़ों भिखारिनें वहाँ जाती हैं।

दीवानचन्द : मैंने और सैंकड़ों को नहीं, बस इसी एक को देखा। इसके कपड़े फटकर तार-तार हो रहे थे। शरीर कपड़ों में छिप नहीं रहा था और मैंने देखा कि वहाँ ऐसे नेकबख़्त भी हैं, जो इसकी तरफ़ भूखी आँखों से देखते हैं...।

[भोलानाथ झुंझला उठता है।]

भोलानाथ : ख़ैर, उस लड़की की बात छोड़िए। यह बताइए कि आप मुझसे क्या कहना चाहते हैं।

दीवानचन्द मैं वही बात कह रहा हूँ, बाबू भोलानाथ। मैं उस लडकी को वहाँ से अपने साथ ले आया हूँ ।

[माधुरी झटका खाई-सी कुर्सी पर बैठ जाती है। भोलानाथ घूमकर मीरा की कुर्सी के पास आ जाता है।]

भोलानाथ तो आप उस भिखारिन लडकी को साथ घर ले आये हैं।··· खूब !

माधुरी जीजा जी, आपको हम लोगो की इज्जत का तो कुछ ख्याल करना चाहिए। इस तरह एक भिखारिन को घर लाकर· !

[जैसे आवेश मे उसे आगे शब्द नही मिलते। भोलानाथ मीरा की कुर्सी की बाह पर बैठ जाता है।]

भोलानाथ अच्छा ही है। इन्हे किसी के साथ की जरूरत भी थी। अब इनका दिल लगा रहेगा। आदमी के लिए अकेले जिन्दगी काटना बहुत मुश्किल होता है।

[मीरा अर्थपूर्ण दृष्टि से माधुरी की ओर देखती है।]

मीरा पाँच बाईस हो गये।

[माधुरी फिर कुर्सी से उठ जाती है।]

माधुरी पाँच बाईस हो गये। और महिपत अभी चाय की प्याली लेकर नही आया। महिपत !

महिपत (अन्दर से) जी, आया।

दीवानचन्द नौकर को मना ही कर दो, माधुरी बीबी। तुम्हारे मेहमान आने वाले हैं।

माधुरी जी नही, अभी ले आता है मगर आप ।

भोलानाथ हाँ, तो आप कह रहे थे कि आप उस लडकी को घर ले आये हैं।

दीवानचन्द हाँ, मैं उसे साथ घर ले आया हूँ। वह हमारे जैसे अच्छे खानदान की लडकी है। मगर उसके माँ-बाप पाकिस्तान म मारे गये थे। मैंने अपने से कहा कि दीवानचन्द जिस लडकी के लिए तू इतना व्याकुल था, समझ ले आज वह तुझे मिल गई है। मैंने तभी मन म तय कर लिया कि इसे पास रखकर अपने दिल की सब हसरतें पूरी करूँगा। इसे पढाऊँगा, इसका ब्याह करूँगा। इसस मुझे अपनी जिन्दगी भी इस तरह बेकार नही लगेगी।

भोलानाथ : तो आप उस भिखारिन का ब्याह भी रचाएँगे…खूब !

दीवानचन्द : अब उसे भिखारिन क्यों कहते हो, बाबू भोलानाथ ? अब तो वह मेरी लड़की है।

माधुरी : जो जगह-जगह जाकर पैसा-पैसा माँगती रही है, उसे आप अपनी लड़की कैसे कहते हैं ? जाने कहाँ-कहाँ किस-किसके पास वह रही है और क्या-क्या उसके साथ हुआ है ! ऐसी लड़की को बेटी बनाकर आप उसका ब्याह करेंगे !

दीवानचन्द : मैं सब जानता हूँ, माधुरी बीबी। पर मेरी शुक्ला के साथ भी तो क्या-क्या बीती होगी ? वह आज मुझे मिल जाती तो उसे मैं ठुकरा देता ? और इस लड़की को मैं न मिलता, इसका बाप मिल जाता…वह इसे छोड़ देता ?

मीरा : लेकिन आप उसे पढ़ायेंगे, उसका ब्याह करेंगे, तो उसके लिए पैसे-पैसे की जरूरत नहीं पड़ेगी ? आप तो कह रहे थे कि आपके पास कुछ भी नहीं है।

दीवानचन्द : आज मैं इसीलिए बाबू भोलानाथ के पास आया हूँ।

भोलानाथ : मेरे पास ?

दीवानचन्द : बाबू भोलानाथ, पम्मी को आज तक मैंने अपनी शुक्ला की तरह समझा है। मुझे विश्वास है कि तुम आज मेरी इस लड़की को पम्मी की जगह मानोगे और मेरी थोड़ी मदद कर दोगे।

[भोलानाथ गुस्से में खड़ा हो जाता है।]

भोलानाथ : आप उस भिखारिन को मेरी लड़की से मिला रहे हैं ?

दीवानचन्द : अब उसे भिखारिन क्यों कहते हो, बाबू भोलानाथ ? मैं उसे अपनी लड़की मानकर घर लाया हूँ। अब वह मेरी लड़की है। मैं तुम्हें बता नहीं सकता कि शुक्ला को लेकर आज भी मेरे दिल में कितनी-कितनी साधें उठती हैं…।

माधुरी : शुक्ला होती तो आपकी सब साधें पूरी होतीं। किसी और की लड़की लेकर थोड़े ही वे पूरी होंगी ?

दीवानचन्द : माधुरी बीबी, मैं इस लड़की को अब अपनी शुक्ला ही समझता हूँ, तुम मेरी यह बात क्यों नहीं समझ पाती हो ?

[महिपत प्याली लिये हुए चाय को चम्मच से हिलाता हुआ आता है।]

मीरा : चाय आ गयी !

[चाय की प्याली महिपत से लेकर दीवानचन्द की ओर बढ़ा देती है।]

मीरा जीजाजी, चाय ले लीजिए। साथ कुछ खाने को भी लीजिएगा?

दीवानचन्द : नहीं, खाने को कुछ नहीं। दाँत ऐसे हो गये हैं कि कुछ खाया ही नहीं जाता। ऐसे चाय भी नहीं पीता। कभी तुम्हारे घर आऊँ या यहाँ आऊँ—तभी एकाध प्याली पी लेता हूँ।

[चाय का घूँट भरता है, परन्तु ओठ जल जाने से प्याली छलक जाती है। ओठों पर जबान फेरता है और चाय को फूँक मारकर ठण्डी करने लगता है। माधुरी व्यस्तता और चिन्ता से घड़ी की ओर देखती है।]

माधुरी : वे लोग अब चार-छः मिनट में आ ही जायेंगे।

[परेशानी से ओठ काटकर मीरा की ओर देखती है।]

: मिसेज़ मेहता इज़ वेरी पक्चुअल।

मीरा : जीजाजी, आप जल्दी से चाय पी लीजिए और·· मेरा मतलब है कि जो मेहमान आ रहे हैं, वे ज़रा और तरह के हैं। आपको भी उन लोगों में बैठकर बुरा लगेगा। इसलिए···।

दीवानचन्द हाँ-हाँ, बस जा ही रहा हूँ। मुझे पता है, ऐसे कपड़ों से मेहमानों में बुरा लगता है।

[चाय सॉसर में डालकर पीने लगता है।]

माधुरी (मीरा से) इट्स हॉरीबल!

मीरा : जीजाजी, इस तरह चाय पी जाती है, सॉसर में डालकर···?

[दीवानचन्द फूँक मारकर जल्दी-जल्दी घूँट भरता है।]

दीवानचन्द . इस तरह जल्दी पी जाती है, मीरा बीबी। नहीं तो ठण्डी होने में देर लगती है।

माधुरी : (मीरा से) सपोज़ दे कम जस्ट नाउ।

[मीरा कुर्सी की पीठ से टेक लगा लेती है।]

मीरा ओन्ली गॉड कैन हेल्प!

भोलानाथ अच्छा तो मुझे इजाजत दीजिए।

[भोलानाथ घड़ी देखता है, फिर फीता कलाई में घुमाने लगता है।]

भोलानाथ : मेहमान अब आने ही वाले हैं। इस समय मुझे उधर बैठना चाहिए।

[दीवानचन्द आधी पी हुई प्याली तिपाई पर रखकर अँगोछे से होंठ पोंछता हुआ खड़ा हो जाता है।]

दीवानचन्द : मुझे बस ज़रा-सी बात ही कहनी है।

[भोलानाथ बेसब्री से कुर्सी की पीठ को पकड़ लेता है।]

भोलानाथ : तो जो भी कहना है, जल्दी से कह डालिए। इधर-उधर की बातें फिर हो जायेंगी।

दीवानचन्द : मैं ज्यादा नहीं कहता। तुम आज मुझे हज़ार पाँच-सौ रुपया भी कर्ज़ दे दो तो मैं एक छोटी-मोटी दुकान खोल लूँगा और···।

माधुरी : जीजाजी, आप इस उम्र में दुकान खोलेंगे?

मीरा : जबकि आपसे ठीक से चला भी नहीं जाता?

भोलानाथ : लेकिन उसके लिए हज़ार-आठ सौ रुपया मैं कहाँ से दे सकता हूँ?···आजकल के जमाने में हर आदमी अपना गुज़ारा मुश्किल से करता ह।

दीवानचन्द : तुम जानते हो, बाबू भोलानाथ, कि और मेरा कोई नहीं है। तुम्हीं एक हो, जिससे मैं माँग सकता हूँ। और दो-चार साल में तुम्हारा रुपया लौटा भी दूँगा।

भोलानाथ : माफ़ कीजिए, मेरे पास रुपया होता तो मैं दे देता। नहीं हो तो कहाँ से दूँ? मेरे मेहमान आ रहे हैं, इसलिए अब मुझे इजाज़त दीजिए। फिर कभी मुलाकात होगी।

[झटके से अन्दर की तरफ़ चला जाता है। दीवानचन्द ठुकराया-सा याचना की दृष्टि से माधुरी की ओर देखता है।]

दीवानचन्द : माधुरी बीबी, तुम दीवानचन्द को अच्छी तरह जानती हो। मैं तुम्हारा रुपया रखूँगा नहीं। तुम मुझे हज़ार-आठ सौ नहीं, तो चार-पाँच सौ रुपया ही दिला दो। मैं उतने पैसों से ही कुछ-न-कुछ काम कर लूँगा।

माधुरी : जीजाजी, दे सकते तो वे आपको इस तरह मना न करते। नहीं दे सकते, तभी तो उनको मना करना पड़ता है। आप भी सोचें कि इन्कार करते उन्हें कितना बुरा लगा होगा।

मीरा : इट इज आलमोस्ट टाइम !

दीवानचन्द : माधुरी बीबी, तुम मेरे लिए कुछ न करोगी तो मेरे हाथ बिलकुल टूट जायेंगे'''मैं इस लडकी को कितनी चाह से लाया हूँ'''।

माधुरी : जीजाजी, क्योंकि लोग आनेवाले हैं, इसलिए'''अच्छा ये बातें अब फिर होंगी।

दीवानचन्द : मैं जा रहा हूँ, बीबी।

[जेब से एक मैला-सा नोट और एक मिठाई का दोना निकालता है।]

माधुरी यह क्या है ?

दीवानचन्द यह रुपया पम्मी के लिए और यह चिंतपुरनी का प्रसाद'''।

माधुरी : जीजा जी, आप हर बार यह सब क्यो ले आते हैं ? मैंने कितनी बार आपसे कहा है कि आप यह सब मत लाया करें ?

[दीवानचन्द आँखो को बाँह से पोछता है।]

दीवानचन्द : दिल नही मानता, बीबी। बेटी से मिलने आता हूँ तो खाली हाथ आना अच्छा नही लगता। अब मेरा दिल बुरा न करो, रख लो।

मीरा . कीप इट, जीजो। डोंट वेस्ट टाइम ओवर इट।

[माधुरी वितृष्णा से दोनो चीज़ें पकड़ लेती है।]

दीवानचन्द : ज़रा पम्मी को बुला दो। जाते हुए उसके सिर पर हाथ फेर दूँ।

माधुरी : पम्मी उधर कही होगी। शायद नौकर से चीजें लगवा रही हो।

मीरा : मैं आपकी तरफ से उसके सिर पर हाथ फेर दूँगी।

दीवानचन्द : अच्छा-अच्छा ! सिर पर हाथ फेरना और बहुत-सा प्यार देना।

[बरामदे मे जाकर बायी ओर के दरवाज़े की तरफ जाने लगता है।]

माधुरी : इधर से चले जाइये, जीजा जी, दूसरे दरवाजे से'''।

दीवानचन्द : अच्छा-अच्छा ! जिधर से कहो, उधर से चला जाता हूँ।

[दायी ओर के दरवाज़े की तरफ़ चल देता है। दरवाज़े के पास से मुड़कर उनकी ओर देखता है।]

दीवानचन्द : बीबी, मेरी किसी बात का बुरा नहीं मानना।

[चला जाता है। माधुरी कटी-सी कुर्सी पर पड़ जाती है।]

माधुरी : थैंक गॉड ! उनके आने से पहले ही ये चले गये।

[पैर तिपाई पर रखती है। तिपाई पर रखी हुई प्याली गिरकर टूट जाती है। मीरा के गले से हल्का-सा हँसी का स्वर निकलता है।]

मीरा : और प्याली टूट गयी ?

माधुरी : अब टूटने दो। ग्रह तो टल गया। मुझे बहुत डर लग रहा था। अगर मिस्टर और मिसेज मेहता इनके यहाँ होते ही आ जाते···।

मीरा : अभी पूरे साढ़े पाँच हुए हैं।

माधुरी : आज ये ऐसे वक़्त आ टपके कि बस···।

मीरा : आये तो कुछ दे ही गये हैं। एक रुपया और देवी का प्रसाद···।

[माधुरी जैसे याद आ जाने से अपने हाथ में पकड़े हुए रुपये और दोने को देखती है।]

माधुरी : मैं इनकी लायी हुई कोई चीज़ अपने पास नहीं रखती। हमेशा नौकर को दे दिया करती हूँ।

[पम्मी अन्दर से भागती हुई आती है।]

पम्मी : ममी, मिस्टर और मिसेज मेहता आ गये।

[माधुरी उठकर खड़ी हो जाती है।]

माधुरी : आ गये ?···महिपत !

[महिपत दायीं ओर के दरवाज़े से आता है।]

महिपत : जी !

माधुरी : इधर आ। यह ले रुपया···और यह बर्फ़ी।···खा लेना। और ये प्याली के टुकड़े जल्दी से साफ़ कर।

महिपत : और प्याली टूट गयी ?

माधुरी : हाँ-हाँ, जल्दी कर। कोई टुकड़ा रह न जाये। और जल्दी से अन्दर से दोनों फूलदान उठा ला।

[महिपत टुकड़े बीनने लगता है।]

पम्मी : ममी, मिसेज मेहता न मौसा जी को यहाँ से जाते देख लिया है।

माधुरी : देख लिया है ?

[हताश भाव से कुर्सी पर बैठ जाती है।]

पम्मी : वे पूछ रही थीं कि वह कौन आदमी था, जो रोता हुआ तुम्हारी कोठी से बाहर जा रहा था।

माधुरी मैं तुमसे न कहती थी, मीरा, कि कुछ-न-कुछ जरूर होगा।

[तिपाई पर कुहनियाँ रखकर दोनों हाथों से सिर पकड़ लेती है।]

: *यह औरत अब जगह-जगह इस बात की चर्चा करेगी। कई-कई तरह के मतलब निकालेगी।*

मीरा कोई मतलब नहीं निकालेगी। तुम अब इस बात को दिल से निकाल दो···। महिपत, साहब से कहो, मिस्टर और मिसेज मेहता को इधर ले आयें।

[महिपत टुकड़े बीनकर सीधा होता है।]

माधुरी : सब टुकड़े बीन लिये ?

महिपत : जी।

माधुरी : कोई टुकड़ा रह तो नहीं गया ?

महिपत : जी नहीं।·· उन लोगों को भेज दूँ ?

माधुरी ठहर जाओ, अभी नहीं।

[उसी तरह सिर पकड़े बैठी रहती है। मीरा उठकर उसके कंधे पर हाथ रखती है।]

मीरा . क्या बात है जीजी, तबीयत तो ठीक है ? फिर से तुम नर्वस हो रही हो ?

माधुरी मीरा, तुम और पम्मी उन लोगों के पास जाकर बैठो। मैं अभी ठीक होकर सबको बुला लेती हूँ।

मीरा बात क्या है, जीजी ? इस तरह निढाल होकर बैठोगी तो पार्टी की सारी तैयारी बेकार हो जायेगी।

माधुरी : मैं तुमसे कह रही हूँ, मीरा, कि मैं अभी ठीक हुई जाती हूँ। तुम तब तक पम्मी को लेकर उन लोगों के पास चली जाओ।

मीरा : तो तुम दो मिनट में ठीक हो जाओ। मैं उतनी देर उनसे बात करती हूँ। महिपत, तुम जाकर चीजें ठीक करो। पम्मी !

[महिपत दायें दरवाज़े से तथा मीरा और पम्मी बायें दरवाज़े से चली जाती हैं। माधुरी उसी तरह बैठी रहती है।]

माधुरी : कितनी मनहूस छाया है इनकी ? यह छाया मेरे दिमाग से निकलती क्यों नहीं ? क्यों ये सब कुछ लेकर आते हैं ? क्यों इतना प्यार दिखाते हैं ? क्यों ऐसी बातें करते हैं ? मेरे शरीर में एक घिनौनी सिहरन भर जाती है और···मुझे···मुझे अपना आप भी मनहूस लगने लगता है—बेहद मनहूस ! हाथों में मुँह छिपा लेती है।

[पर्दा गिरता है।]

अंधकार के पंजे



यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'

स्थान : झोपड़ी ! झोपड़ी के आगे पति दुर्गादास और हंसा बैठे हैं। दुर्गादास रस्सी बुन रहा है।

हंसा : (धीमे स्वर में) तू उदास हो गया, चम्पू के बापू ?

दुर्गादास : (सँभलकर) नहीं, नहीं, तुझे वहम हो गया है।

हंसा : झूठ क्यूँ बोलता है ? तेरा मुंह तो ऐसा लगता है जैसे तू अपनी गाय को कसाई के हाथ बेचने जा रहा है। इत्ता उदास !

दुर्गादास : उदास···। उदास होने की बात भी है। मेरे ख्याल से यह सौदा बड़ा महँगा पड़ेगा। (रुककर) चम्पू की माँ। तू अपने भाई के पीछे मेरी बेटी सहोदरा की जिन्दगी को क्यों बरबाद कर रही है।

हंसा : (थोड़े तीखे स्वर में) तू हमारी रीति रिवाज को नहीं बदल सकता। जानते हो—यदि मैं सहोदरा का लोभ करूँगी तो तेरा चम्पू अखन कुँआरा रह जाएगा। फिर वंश कैसे चलेगा ? (रुककर उपदेशात्मक स्वर में) फिर मेरी माँ यह सौदा नहीं करती तो तू मेरा घरवाला कैसे कहलाता ?

[गहरी शान्ति पल-भर के लिए छा जाती है।]

दुर्गादास : बस, यही सोचकर मैं चुप हूँ। सोचता हूँ—पीढी-दर-पीढ़ी चली आ रही इस गलत परम्परा···

हंसा : बात बिलकुल साफ है चम्पू के बापू, ऐसा यदि हम नहीं करेंगे तो काम कैसे चलेगा ?···तू ही देख, सहोदरा के बदले मेरे भाई

आसू की सगाई होगी और मेरी भतीजी के बदले अपने चम्पू की। (रुककर) पर एक बात का खयाल रखना।

दुर्गादास : वह क्या ?

हंसा : किसी की लिहाज मत रखना।

दुर्गादास : चम्पू की माँ। अब तू बता, लिहाज, लिहाज क्यों कह रही थी ? मुझे किस बात के लिए होशियार रहना पड़ेगा ?

हंसा : तू मेरी माँ से लिखत-पढ़त करा लेना। इस तरह की बातों में अपने बाप का भी विश्वास नहीं करना चाहिए। सौदा पक्का होना चाहिए।

दुर्गादास : तू ठीक कहती है, मैं उससे लिखा-पढ़ी करवा लूँगा।

हंसा : चम्पू के बाप, भूलना मत।

दुर्गादास : अरे भाग्यवान, तू क्यों चिंता कर रही है। मर्द का बच्चा इतना नादान थोड़े ही होता है।

[आवाज—माँ; माँ···मामा-मामी आ गए हैं]

हंसा : ओ, जरा तू हटकर क्यों नहीं बैठता ? माँ देखेंगी तो क्या कहेंगी ?

दुर्गादास : कहेंगी क्या ? क्या मैं उसके सामने तेरा हाथ पकड़कर अपने घर नहीं लाया ?

हंसा : (शरमाकर) धत्, तू बड़ा वो है।

[तभी सरजू और हंसा की माँ बरजी का प्रवेश। हंसा घूँघट निकालकर खड़ी हो जाती है।]

सरजू : (दुर्गा से) बहनोई जी, पालागी।

दुर्गादास : कैसे हैं आप, अच्छे हैं न ? (बरजी की ओर) पालागी।

बरजी : जीते रहिए, क्यों सब कुशल क्षेम है ?

दुर्गादास : जी !

बरजी : आप दुबले कैसे हो गए ?

दुर्गादास : नहीं तो, आपको वहम हो गया है।

हंसा : (माँ से, धीमे स्वर में) माँ, मैं भीतर जाती हूँ।

बरजी : हाँ, तू भीतर जा।

दुर्गादास : आप यहाँ विराजिये, सरजू जी, चम्पू की माँ छाछ का गिलास बनाकर ला तो। (फिर लम्बी साँस लेकर) मेरी चाची उन्हें पल-भर के लिए अपनी आँखों से दूर करना नहीं चाहती। फिर मैं कैसे लाता ? जरा जल्दी करियो।

बरजो : हम आज सांझ पड़ी ही वापस जाना चाहते हैं।

दुर्गादास ऐसी भी क्या जल्दी है ?

बरजो घर पर बहुत-सा काम रहता ही है। उस पर सावन के बादल मँडरा रहे हैं ? कल भी पानी बरसा था और आज भी बरसने की आशा है। तो फिर आपने क्या तय किया ? आप सहोदरा के बदले में मेरी पोती का बदला मंजूर करते हो ?

दुर्गादास : (गंभीरता से) क्या इस बदला-बदली के अलावा कोई नया मार्ग नहीं हो सकता ?

बरजो · (तनिक चिढ़कर) इस जन्म में तो नहीं हो सकता। आपको मालूम नहीं है जिस जाति में पीढ़ी-दर-पीढ़ी, सौदों पर ही वंश को बढ़ाया जा रहा है, उसे आप और हम कैसे बदल सकते हैं ? इसे बदल सकता है केवल एक भगवान।

दुर्गादास : फिर मुझे आपकी बात मंजूर है, बच्चों के शादी-विवाह तो करने ही हैं लेकिन क्या शादी तीन-चार साल तक और नहीं रुक सकती ? ···देखिए, अभी सहोदरा तीन वर्ष की है।

बरजो नहीं कँवर-सा, शादी अगले साल ही करनी होगी। लड़केवाले कहते हैं कि अब हम इंतजार नहीं कर सकते।···इस पर आप को भी अपने बेटे को ब्याहना है। (रुककर) आप निश्चिन्त रहिए, मेरी पोती आपके चम्पू की बहू के बदले में तैयार है।

दुर्गादास फिर मुझे आपकी शर्त मंजूर है, पर ?

बरजो पर क्या ?

दुर्गादास : हमारी इस बात की लिखा-पढ़ी होनी चाहिए, यह सौदा है, इसमें सगे बाप का भी विश्वास नहीं करना चाहिए···सगे बाप का भी···

बरजो : मेरी छोरी के भरतार अपनी सास पर भरोसा रख। मर जाऊँगी पर जबान नहीं बदलूंगी।

दुर्गादास . अच्छा-अच्छा।

[अँधेरा होता है। जब प्रकाश होता है तब तीन साल की बच्ची सहोदरा दुल्हन बनी बैठी है]

: देखा हुसा, इसीलिए मैं तुम्हें कहता था कि यह सौदा हमें बहुत महँगा पड़ेगा। यह नन्ही नादान क्या समझती है कि ब्याह क्या होता है ? अरमान क्या होते हैं ? हमने थाली में डालकर इसकी शादी कर दी। इस पाप की प्रभु हमें अवश्य सजा देगा। सर-

कार क्यों नहीं इन छोटे-छोटे गाँवों में आकर यह सब देखती। इन्हें दण्ड क्यों नहीं देती जो इन मासूमों को बलि पर चढ़ाते हैं।

हंसा : ऐसा कुछ नहीं होगा, ऐसा सदा होता है। (कुछ रुककर) क्यों सजा देगा? हमारे समाज में ऐसा जुगों से होता आया है। अरे हमारी बेटी तो तीन साल की है। भँवर की बेटी छह महीने की ब्याही गयी है।

दुर्गादास : यह उन बच्चों के प्रति घोर अन्याय है। इससे कोई सुख नहीं पाता। ब्याह क्या हुआ—गुड्डे-गुड़िया का खेल! कानून अपराध है।

हंसा : अरे, यह सौदे तो हमारे खानदानों में होते आये हैं। क्या कानून होता है!

दुर्गादास : यह बुरा है, गलत है? पाप है।

हंसा : अरे सिपाही दाताराम की अपनी बेटी भी पाँच साल की ब्याही गई है। फिर गलत कैसे?

दुर्गादास : मैंने जब-जब विरोध किया, तब तूने आकाश-पाताल अपने सिर पर उठा लिया था। मेरा जीना हराम कर दिया था और अब···? खैर, तेरे मन की इच्छा पूरी हो गयी, तेरे कलेजे को तो शान्ति आ गयी है।···और फिर प्रभु जो करता है, अच्छा ही करता है।···हंसा, ओ हंसा, ला, अरी पगली बात-बात पर नाराज हो जाती है। जा मेरे लिए छाछ का गिलास ले आ।

[मंच पर अँधेरा होता है। जब पर्दा उठता है तब हंसा बैठी-बैठी धान साफ कर रही है। तभी लक्खा का प्रवेश।]

लक्खा : (घबराए हुए) हंसा, अरी ओ हंसा, तूने सुना?

हंसा : क्या?

लक्खा : हे राम, बहरी हो गयी क्या? तुझे कुछ पता नहीं?

हंसा : अरी जब तू बताएगी, तब तो पता चलेगा?

लक्खा : तेरा जँवाई सख्त बीमार है, उसे मोतीझरा निकल आया है।

हंसा : (हंसा के हाथ की थाली गिर पड़ती है) क्या कहती है लक्खा, परसों तक वह बिल्कुल ठीक थे। सहोदरा के बापू खुद जाकर आये थे। ब्याह हुए दो साल हो गए हैं। सोचा—जँवाई को देख आयेंगे। फिर गौना कर देंगे।

लक्खा : (बीच में) पर आज उसकी हालत बहुत खराब है भौजाई,

अभी मैं सहोदरा की ससुराल से होकर आयी हूँ। चारों ओर घोर उदासी छायी हुई है।···वैद्यजी ने बताया है कि लड़का भगवान की किरपा से ही बच सकता है।

दुर्गादास : (प्रवेश करते हुए) क्या मतलब ?

लक्खा : भाई जी ! बहुत खराब समाचार है।

दुर्गादास क्या ?

लक्खा : सहोदरा के धणी (पति) को मोतीझरा निकल आयी है। गलत निकल आया है !···वैद्यजी का कहना है कि यदि जान भी बच गयी तो आँखों की ज्योति चली जाएगी।

दुर्गादास नहीं-नहीं···ऐसा नहीं हो सकता ? भगवान मेरी बेटी के प्रति इतना कठोर नहीं हो सकता ? हे दीनानाथ···मेरी बेटी के सुहाग की लाज रखना। (सोचकर) लक्खा ! क्या उसे चेचक का टीका नहीं लगाया गया था ?

लक्खा : लगाया होता तो इतनी भयानक चेचक थोड़े ही निकलती ? पता नहीं, लोग अन्धविश्वासों के चक्कर में सही बातें नहीं करते ? झाड़-फूंक कराते रहे पहले ! अब स्थिति बिगड़ गई है।

[तभी रोते हुए हंसा का आना।]

हंसा . हाय मैं लुट गयी···सहोदरा, ए सहोदरा·· हाय, अब मैं क्या करूंगी ?

दुर्गादास : मर गया बेचारा···मेरी लाडली पाँच साल में ही विधवा हो गयी।···अब इसके जीवन में अँधेरा-ही-अँधेरा रहेगा।···

सहोदरा : बापू·· बापू···माँ मुझे क्यों रोती है। मैं तो जिन्दा हूँ।

दुर्गादास (उसे सीने से लगाकर) बेटी ! हमारे समाज का यही मजाक है कि पति मरे तो भी पत्नी को रोये ?

सहोदरा : मेरा धणी (पति) मर गया···

सुजान : (शान्ति से) दुर्गादास ! चलो भाई चलो, अपन नहीं जायेंगे तब तक वे अर्थी नहीं उठायेंगे।

दुर्गादास : (आँसू पोंछकर) मेरा सर्वनाश हो गया·· अब मेरी बेटी का पहाड़-सा जीवन कैसे गुजरेगा ? इन सभी लोगों ने उसे मार डाला (रोता है।)

[मंच पर अँधेरा होता है। हंसा बैठी-बैठी धान साफ कर रही है।]

हंसा : वक्त जाते देर नहीं लगती। पूरे बारह साल बीत गए।…मेरी बेटी की चूड़ियाँ टूटे…बेचारी सेठ डागा के यहाँ झाड़न-बुहारी और बर्तन मांजने का काम करती है। जवानी में मेहनत नहीं करेगी तो पग उलटा पड़ जायेगा। पर मोहन का जादू उस पर है।

[दुर्गादास का प्रवेश।]

दुर्गादास : (प्रवेश करते हुए) अरी ओ सहोदरा…बेटी सहोदरा…देख, मैं तेरे लिए क्या लाया हूं?

सहोदरा : क्या है बापू?

दुर्गादास : देख मैं तेरे लिए कितनी अच्छी ओढ़नी लाया हूँ।

[कागज में से ओढ़नी निकालकर]

सहोदरा : आह! मुझे लाल ओढ़नी बहुत पसन्द है। (खुशी में नाचती है।)

हंसा : (बिफरकर) क्या लाल ओढ़नी (झपटकर ओढ़नी छीन लेती है) तुम्हारा तो माथा खराब हो गया है। जैसे-जैसे बड़े हो रहे हैं, तुम्हारी अक्ल मारी जा रही है। विधवा बेटी को क्या लाल-पीला पहनाया जाता है। बाप-बेटी हमारी इस समाज में यह बदनामी कराके ही रहेंगे।

दुर्गादास : मेरी बेटी को विधवा न कहो…केवल विवाह-मंडप के धुएँ के छूने मात्र से तो कोई सुहागिन नहीं होती। मन से, तन से और कर्म से तो उसका कोई नाता-रिश्ता नहीं है।

हंसा : विवाह-मंडप के चार फेरों के बाद औरत का क्या बचता है? वे ही फेरे तो धर्म के बन्धन हैं। तभी पंडित जी ठीक कहते थे कि सेठ जी के घर आते-जाते…

सहोदरा : पंडित झूठा, मक्कार और पापी है। मैं जब-जब जाती हूँ तब-तब वह मुझसे गंदी बातें करता है।

हंसा : तोहमत। अरे सारा शहर चर्चा कर रहा है कि तू मोहन से रामदेव मन्दिर में मिलती है।

दुर्गादास : और कोई बदनाम करे या न करे, पर तू अपनी बेटी को जरूर बदनाम करके ही दम लेगी। अरे! तीन साल की उमर में ब्याह…पांच साल में विधवा…क्या सारा जीवन बर्तन मांजते ही बिताएगी। हमें भगवान कभी माफ नहीं करेगा।

सहोदरा : बापू! मैं बाबा रामदेव जी की कसम खाती हूँ।…वह मेरा धर्म भाई है। वह मेरी इज्जत की रक्षा करता है।…चम्पू तो

भाई होकर कसाई बन गया है। यदि बहिन कमाकर नही लाती है तो तीखे बोल सुनाता है।

दुर्गादास : बेटी। आदमी छुपकर कितना पाप करे तो कोई बात नही, पर प्रकट मे कुछ भी करे तो हाहाकार मच जाता है।

सहोदरा यही बात है बापू। सुगनी खुले आम जीता को लेकर बैठ गयी ता लोग उसका कुछ नही बिगाड सके। जीता मे दम है न?

हसा तू चुप हो जा। (दुर्गादास) चम्पू के बापू अब आप हाथ-मुंह धोकर जीम लो। फिर आपको दो दिनो के लिए गाँव से बाहर जाना है।

[अँधेरा होता है। फिर मच पर प्रकाश होता है। कमरे मे सहोदरा दुल्हन के कपडे पहने सजी हुई बैठी है।]

सहोदरा (शीशा देखकर) सावन का महीना है। सारी छोरियाँ सज-धज कर सावन के झूले झूलती हैं, मेले जाती हैं। पर सच, मैं कितनी सुन्दर हूँ। सेठानी तभी कहती है कि मैं रूप की रभा हूँ। इन कपडो म मैं कैसी अच्छी लगती हूँ।

[खट-खट की आवाज]

दरवाजा कौन खटखटाता है। इतनी रात गये कौन हो सकता है। दरवाजा खोलूं? (विग मे जाती है) कौन···पडित जी? इतनी रात गये?

गणेशानद वाह, इतनी रात गये दीया जल रहा है? यह सोलह-श्रृगार करके कहाँ जा रही हो? यह रेशमी साडी, यह दमदमाती बिंदिया, यह माँग मे सिंदूर, बता, हर रात सजकर कहाँ जाती है?

सहोदरा : कही नही, पडित जी, कही नही जाती हूं। मैंने आज···। मन मे आ गयी इन कपडो को पहनने की।

गणेशानद (धीमे किन्तु डाँट-भरे स्वर म) सब समझता हूँ मैं? आज मैं अपने एक-एक अपमान का बदला गिन-गिनकर लूंगा। बोल या तो जैसा मैं कहूँ वैसा कर ले अन्यथा मैं आज हल्ला मचा कर सारा मौहल्ला इकट्ठा कर लूंगा।

सहोदरा : पण्डित जी, मैं आपके पाँव पडती हूँ, मैंने कोई अपराध नही किया। पाप नही किया? मन के भीतरी दबाव के कारण मैं यह सब कर बैठी।

गणेशानंद : फिर यह शृंगार क्यों किया था ?

सहोदरा : मैं कुछ नहीं जानती, पंडित जी, मैं सच कहती हूँ कि मैंने यह सब कैसे और क्यों कर लिया ? अन्तस में एक आग जरूर जलती है कि मैं भी दूसरी छोरियों की तरह नाचूं-गाऊँ। मैं पत्थर की तो नहीं हूँ।

गणेशानंद : फिर मेरा कहना मान ले। मैं तुझे जीवन का सारा सुख दूंगा। अपने हृदय की रानी बनाकर रखूँगा···। मेरे पास बहुत पैसा है, इज्जत है !

सहोदरा : (तीखे स्वर मे) पंडित बनता है, पापी ? धर्म की कथाएँ सुनाता है। खबरदार आगे बढ़ा तो ?

गणेशानंद : अच्छा जी, नौ सौ चूहे मार बिल्ली हज को चली। देख सहोदरा या तो तू मेरा कहना मान ले, नहीं तो मैं तुझे बरबाद करके छोड़ूंगा। तेरे चारों ओर आग-ही-आग लगा दूंगा।

सहोदरा : (शांत होकर) यह सही है कि मैंने रात के अँधेरे में दुल्हिन के कपड़े पहने पर यह भी सही है कि मैं पवित्र हूँ। मेरी भावना और मेरा हृदय धर्म की तरह साफ़ है। जाइये और ढोल पीट-पीटकर कहिए कि मैं लुच्ची हूँ, लफंगी हूँ, छिनाल हूँ, जाइए··· मैं कहती हूँ चिल्लाइए।

[चम्पू का प्रवेश]

चम्पू : क्या है, क्या है, अरे पंडित जी आप ?

गणेशानंद : अरे भैया, इस नागिन से बचो, नहीं तो यह खानदान की नाक कटाकर ही दम लेगी।

[हंसा का प्रवेश]

हंसा : यह कैसा शोरगुल मचा रखा है ?···अरे पंडित जी आप ?··· और तूने यह कैसा भेष बना लिया है, मालजादी ?

चम्पू : मां। ये हैं तेरी लाडली के कारनामे ? रात के अँधेरे में हम सब की आंखों मे धूल झोंककर अपने को पाप में डुबो रही है।

सहोदरा : (घबराकर) माँ, माँ, यह सब झूठ बोल रहे हैं। यह सब मुझे बदनाम कर रहे हैं। मैंने तो बस यूँ ही यह कपड़े पहन लिये थे। मन में दूसरी सहेलियों की तरह···

हंसा : (दाँत किटकिटाकर) अपनी माँ को रोने के लिए तूने ऐसा भेष बनाया ? नीच, पापिन, तू पैदा होते ही क्यों नहीं मर गई, तुझे काला नाग क्यों नहीं डस गया।

गणेशानद चम्पू, थोडी देर पहले मेरे पेट मे अचानक जोर का दर्द उठा, इसलिए मैं अमृत धारा लेने के लिए यहाँ आ गया और यहाँ आकर देखता हूँ तो हे राम· ?

चम्पू (उतावली से) क्यो, क्या यहाँ पर और कोई था ?

गणेशानद क्या बताऊँ, दूर से मैंन एक छाया-सी बाहर निकलती देखी थी।

सहोदरा (तपककर) झूठ, बिलकुल झूठ, माँ, यही पापी मुझस कह रहा था कि मरा कहना मान ले नही तो मैं तेरा जीवन बरबाद कर दूंगा।

हसा : अब सतवन्ती बनने चली है। मैं जानती हूँ कि वह कौन था ?

चम्पू (गुस्से मे) माँ, तू उसका नाम बता, मैं उसकी बोटी बोटी काट दूंगा। मेरी इज्जत पर हाथ डालन वाले के मैं हाथ काट डालूंगा।

हसा अरे, वही मोहन होगा। गोपियो के सग खेलने वाला मोहन।

गणेशानद · मुझे भी उसी का वहम है। मेरे मुँह के राम-राम को सुनते ही वह ऐसा उडा जैसे शिकारी के हाथ से कबूतर। (अकडकर) पर तू चिन्ता न कर चम्पू की माँ, आज दुर्गा नही है तो क्या हुआ, मैं तो हूँ। सारी पचायत को इकट्ठी करके मोहन का हुक्का-पानी बन्द न करवा दूँ तो, मेरा नाम भी गणेशानद न्यायशास्त्री नही।

सहोदरा (रोकर) माँ, माँ, तू इसकी बातो मे न आना, यह बडा दुष्ट है। और यदि चम्पू भैया, मुझ पर बुरी नजर रखता है तो मोहन भी ? वह मुझे बहिन मानता है।

चम्पू (थप्पड मारकर) खामोश। क्यो अपने पाप को छुपा रही हो। तो सच सच बता द कि तू यह किसके लिए सजती-सँवरती है, नही ता आज तेरी जान निकालकर ही दम लूगा। तूने मेरा असली गुस्सा नही देखा है।

सहोदरा · चम्पू ! मेरी भी यही इच्छा है कि तुम सब मिलकर मुझे जान से मार दो। मैं भी अब जीना नही चाहती ... के साथ रहन स अच्छा है कि मैं

हसा अब तो तू यह भी जरूर कहेगी। अब ... तुम लोगा स कोई सम्बन्ध नही है। अब मैं

सहोदरा (बीच मे, प्रार्थना से) माँ, तू विश्वास निर्दोष हूँ। ...िसी अपवित्र भावना

और न ही मैंने किसी को रिझाने के लिए ही। पर माँ, मैं चाहती हूँ कि एक बार मैं दुलहन।

गणेशानंद : कलियुग, घोर कलियुग, देखा चम्पू, यह किसी की दुल्हिन बनना चाहती है। यह धर्म को मिटाना चाहती है, यह परम्परा को तोड़ना चाहती है। चम्पू की माँ, अब तू इस रूपवती का घमण्ड चूर नहीं करेगी तो एक दिन यह तेरा विनाश करके ही छोड़ेगी। यह किसी लफंगे के साथ भाग जायेगी।

हंसा : मैं क्या करूँ पंडित जी! इसने तो हमें कहीं का नहीं रखा।··· कभी-न-कभी यह हमारा मुँह काला करके ही रहेगी।

पंडित : मैंने तो इसे समझाया, तो यह मुझ पर ही दोष लगाने लगी। यह तो मेरे लिए बेटी-जैसी है।

सहोदरा : (तपाक से) बेटी तो नहीं!

चम्पू : (चांटा मारकर) सहोदरा···ज्यादा जबान मत चला···मैं तेरे यार मोहन को देख लूंगा।···माँ! बापू को आने दे···इसके सारे बाल कटवा डालूंगा···बिगड़ैल कहीं की···कोई भी पापिन लोगों की आंखों में ज्यादा दिन धूल नहीं झोंक सकती।

हंसा : खबरदार, आज से घर में पाँव रखा तो···तेरी टाँग तोड़ डालूंगी···तेरे बनाव-सिंगार को आग लगाऊँ···

सहोदरा : माँ, मैं भी औरत हूँ। मैंने रात को अपने मन की कर ली, इसमें इतना हल्ला क्यों?

हंसा : हल्ला···मैं तेरे मारूँगी खल्ला···(जूती)···नीच···(वह मारती है और उसके शृंगार को मिटाती रहती है) चम्पू! बाहर से ताला लगा दे। कल सुबह इसके बापू आयेंगे तब उन्हें अपनी लाडली की करतूतें बताना···पंडित जी, आप भी आइएगा···

पंडित : जरूर···जरूर···

सहोदरा : मैं सती हूँ माँ···मैंने कोई पाप नहीं किया···जन्म से लेकर आज तक मरद का सुख क्या है, मुझे पता नहीं·· कमर तोड़ मेहनत···और तुम सबकी गालियाँ···झिड़कियाँ और लानतें सुनते-सुनते मेरा मन रोने लगा।···यह धर्म का पण्डा···ये तो शैतान से भी नीच है।

चम्पू : (उसे पीटता है) चुप कर···वर्ना तेरे दांत तोड़ दूंगा···

सहोदरा : मार···और मार···रुक क्यों गया···मार···हत्यारे मार··· कसाई, काट दे मेरी गर्दन।

गणेशानंद : चम्पू, थोड़ी देर पहले मेरे पेट मे अचानक जोर का दर्द उठा, इसलिए मैं अमृत धारा लेने के लिए यहाँ आ गया और यहाँ आकर देखता हूँ तो हे राम···?

चम्पू : (उतावली से) क्यो, क्या यहाँ पर और कोई था ?

गणेशानंद : क्या बताऊँ, दूर से मैंने एक छाया-सी बाहर निकलती देखी थी।

सहोदरा : (तपककर) झूठ, बिलकुल झूठ, माँ, यही पापी मुझसे कह रहा था कि मेरा कहना मान ले नही तो मैं तेरा जीवन बरबाद कर दूंगा।

हंसा : अब सतवन्ती बनने चली है। मैं जानती हूँ कि वह कौन था ?

चम्पू : (गुस्से मे) माँ, तू उसका नाम बता, मैं उसकी बोटी-बोटी काट दूंगा। मेरी इज्जत पर हाथ डालने वाले के मैं हाथ काट डालूंगा।

हंसा : अरे, वही मोहन होगा। गोपियो के संग खेलने वाला मोहन !

गणेशानंद : मुझे भी उसी का वहम है। मेरे मुंह के राम-राम को सुनते ही वह ऐसा उड़ा जैसे शिकारी के हाथ से कबूतर। (अकड़कर) पर तू चिन्ता न कर चम्पू की माँ, आज दुर्गा नही है तो क्या हुआ, मै तो हूँ। सारी पचायत को इकट्ठी करके मोहन का हुक्का-पानी बन्द न करवा दूं तो, मेरा नाम भी गणेशानद न्यायशास्त्री नही।

सहोदरा : (रोकर) माँ, माँ, तू इसकी बातो मे न आना, यह बड़ा दुष्ट है। और यदि चम्पू भैया, मुझ पर बुरी नजर रखता है तो मोहन भी ? वह मुझे बहिन मानता है।

चम्पू : (थप्पड़ मारकर) खामोश। क्यों अपने पाप को छुपा रही हो। तो सच-सच बता दे कि तू यह किसके लिए सजती-सँवरती है, नही तो आज तेरी जान निकालकर ही दम लूंगा। तूने मेरा असली गुस्सा नही देखा है।

सहोदरा : चम्पू ! मेरी भी यही इच्छा है कि तुम सब मिलकर मुझे जान मे मार दो। मैं भी अब जीना नही चाहती। तुम लोगो के साथ रहने से अच्छा है कि मैं ··

हंसा : अब तो तू यह भी जरूर कहेगी। अब तू यह भी कहेगी मुझे तुम लोगो से कोई सम्बन्ध नही है। अब मैं···।

सहोदरा : (बीच मे, प्रार्थना से) माँ, तू विश्वास क्यो नही करती कि मैं निर्दोष हूँ। मैंने किसी अपवित्र भावना से यह कपड़े नही पहने,

और न ही मैंने किसी को रिझाने के लिए ही। पर माँ, मैं चाहती हूँ कि एक बार मैं दुलहन।

गणेशानंद : कलियुग, घोर कलियुग, देखा चम्पू, यह किसी की दुल्हिन बनना चाहती है। यह धर्म को मिटाना चाहती है, यह परम्परा को तोड़ना चाहती है। चम्पू की माँ, अब तू इस रूपवती का घमण्ड चूर नही करेगी तो एक दिन यह तेरा विनाश करके ही छोड़ेगी। यह किसी लफंगे के साथ भाग जायेगी।

हंसा : मैं क्या करूँ पंडित जी ! इसने तो हमें कहीं का नहो रखा।··· कभी-न-कभी यह हमारा मुंह काला करके ही रहेगी।

पंडित : मैंने तो इसे समझाया, तो यह मुझ पर ही दोष लगाने लगी। यह तो मेरे लिए बेटी-जैसी है।

सहोदरा : (तपाक से) बेटी तो नही !

चम्पू : (चांटा मारकर) सहोदरा···ज्यादा जबान मत चला···मैं तेरे यार मोहन को देख लूंगा।···माँ ! बापू को आने दे···इसके सारे बाल कटवा डालूंगा···बिगड़ैल कही की···कोई भी पापिन लोगों की आँखों में ज्यादा दिन धूल नही झोंक सकती।

हंसा : खबरदार, आज से घर में पाँव रखा तो···तेरी टाँग तोड़ डालूंगी···तेरे बनाव-सिंगार को आग लगाऊँ···

सहोदरा : माँ, मैं भी औरत हूँ। मैंने रात को अपने मन की कर ली, इसमें इतना हल्ला क्यो ?

हंसा : हल्ला···मैं तेरे मारूँगी खल्ला···(जूती)···नीच···(वह मारती है और उसके शृंगार को मिटाती रहती है) चम्पू ! बाहर से ताला लगा दे। कल सुबह इसके बापू आयेंगे तब उन्हें अपनी लाडली की करतूतें बताना···पंडित जी, आप भी आइएगा···

पंडित : जरूर···जरूर···

सहोदरा : मैं सती हूँ माँ···मैंने कोई पाप नही किया···जन्म से लेकर आज तक मरद का सुख क्या है, मुझे पता नहीं··कमर तोड़ मेहनत···और तुम सबकी गालियाँ···झिड़कियाँ और लानतें सुनते-सुनते मेरा मन रोने लगा।···यह धर्म का पण्डा···ये तो शैतान से भी नीच है।

चम्पू : (उसे पीटता है) चुप कर···वर्ना तेरे दाँत तोड़ दूंगा···

सहोदरा : मार···और मार···रुक क्यों गया···मार···हत्यारे मार··· कसाई, काट दे मेरी गर्दन।

[सब रीस मे चले जाते हैं। सहोदरा रोती है। उसके चेहरे पर फोकस पडता है।]

सहोदरा मैं पैदा होते ही क्यो नही मर गयी···हे प्रभु, मुझ जन्मजली को तूने पैदा ही क्यो किया ?·· तीन साल मे शादी·· पाँच साल मे विधवा···जवानी तक दु ख-ही-दु ख···जो भी दया दिखाता है, वह थोडे ही दिनो मे शरीर नोचना चाहता है · बेचारा मोहन मुझे सच्चे मन से बहिन समझता है···तो लोग हमे जीने नही देते ? भेडिये हैं सब। पर मैं···मैं अब जिन्दा नही रहूँगी···इस तरह जीने मे कोई सार नही।···बेकार है यह जिन्दगी···सजा है··· दण्ड है···मैं इसे खत्म कर डालूँगी। भोर की नई किरण के साथ मेरे जीवन मे न मिटने वाला अँधेरा छा जायेगा।

[अँधेरा होता है। फिर धीरे-धीरे प्रकाश। सहोदरा फाँसी के फदे से लटकी हुई है। तेज प्रकाश होता है। चम्पू का प्रवेश]

चम्पू . यह क्या···माँ···माँ·· सहोदरा ने फाँसी लगा ली···माँ···

[हसा आती है।]

हंसा . (चिल्लाकर) अरे आओ···हाय बेटो···अरे बचाओ···

[पडित का प्रवेश]

पडित : हैं ! इसने आत्महत्या कर ली।

[दुर्गादास का प्रवेश]

दुर्गादास : (उसकी लाश से चिपटकर) हाय मेरी लाडली···अरे पडित, इसने आत्महत्या नही की है—इसे तूने मारा है, इसकी मा ने मारा है···रूढियो और परम्पराओ ने मारा है···तुम सब जल्लाद हो···हत्यारे हो···(जोर से हँसता है)।

[पर्दा गिरता है।]

□□